श्री १००८ बाहुबली की पावन्तम स्मृति को

श्री चामुण्डराय की प्रेरणा से निर्मित
गोम्मटेश की प्रतिमा के
सहस्राब्द महाभिषेक-समारोह
मार्च १९८१ के शुभ अवसर पर

"रायचक्कु पइ तणु परिगणियउ ।
कम्मचक्कु झाणाणलि हुणियउ ।।
देवचक्कु तुह अग्गइ धावइ ।
चक्कु वि चक्किहि रमणु ण भावइ ।।"

"राजचक्र को तुमने तृण समझा,
कर्मचक्र को ध्यान की आग में होम दिया,
देवचक्र तुम्हारे आगे-आगे दौड़ता है,
और चक्रवर्ती (भरत) को भी अपना
चक्र अच्छा नहीं लगता ।"

प्रास्ताविक

नाभेयचरित – या 'आदिपुराण' – महाकवि पुष्पदत द्वारा अपभ्रंश में विरचित महापुराण का महत्त्वपूर्ण खण्ड है, प्रस्तुत वाहुवलि-आख्यान उसी का एक अश है। इसमें भरत की दिग्विजय के वाद से लेकर वाहुवलि के केवलज्ञान प्राप्त करने तक की घटनाओ का समावेश है। तीन मधियो (१६, १७ और १८) का यह आख्यान कल्पना अनुभूति तथा व्यापक मानवी मूल्यो के कारण, वेजोड और वेलाग है।

मै अपने को कृतकृत्य मानता हू कि मै एलाचार्य पूज्य विद्यानन्दजी की इच्छा को मूर्तरूप दे सका। ७ नव १९७९ को आप दक्षिण भारत के लिए, इन्दौर से मगल विहार करेंगे, और १९८१ मार्च में होनेवाला गोम्मटेश का महामस्तकाभिषेक आपके सानिध्य मे होगा। यह महाभिषेक हर वारह साल में होता है। अत गोम्मटेश स्तुति के साथ, इस 'आख्यान' का हिन्दी अनुवाद सहित प्रकाशन एक ऐतिहासिक सयोग ही माना जाएगा, क्योंकि आज से हजार साल पूर्व, महाकवि पुष्पदत ने इसकी रचना की थी।

कवि का महापुराण वह विध्यागिरि है, जिस पर उसने अपनी कल्पना और अनुभूति से, गोम्मटेश की शब्द-प्रतिमा गढी है जो उनकी प्रस्तर-प्रतिमा की ही तरह अनोखी और महान् है।

मै इस अवसर पर भगवान् वाहुवली प्रतिष्ठापना सहस्राब्दि-महोत्सव-समिति के सम्मान्य अध्यक्ष श्री श्रेयान्सप्रसाद जैन एव श्री वीर नि. ग्र. प्रकाशन समिति के मत्री श्री वावूलालजी पाटोदी का हृदय से अनुगृहीत हूँ। श्री माणकचन्द पाड्या, डॉ. नेमीचन्दजी एव भाई हीरालालजी झाझरी का भी आभार मानता हूँ कि जिन्होंने प्रकाशन में न केवल तत्परता दिखाई अपितु उसे सुन्दर रूप भी दिया।

शान्ति-निवास
११४ उषानगर, इन्दौर
७ नवम्बर १९७९

—देवेन्द्रकुमार जैन

पुष्पदंत की जीवनी और व्यक्तित्व

महापुराण के रचयिता महाकवि पुष्पदंत शैव ब्राह्मण थे। उनका गोत्र कश्यप था। पिता का नाम केशव भट्ट और माता का मुग्धा-देवी। मंत्री भरत के आश्रय में आने के पूर्व वह वीरशैव राजा के आश्रय में रहकर काव्य की रचना कर चुके थे। किसी कारण, वहाँ से, वह चल दिए और लंबा रास्ता पार कर, मान्यखेट नगर के बाहिरी उद्यान में आकर ठहरे। मंत्री भरत के आदमी इन्द्रराज और अन्नइया उन्हें लेने आए। मंत्री भरत के अनुरोध पर, कवि पुष्पदंत उसके शुभतुंग भवन में ठहरना स्वीकार कर लेते हैं। भरत उनसे कहता है—'तुमने वीरशैव राजा की प्रशंसा में काव्य लिखकर मिथ्यात्व का जो बंध किया है, वह तभी मिट सकता है जब तुम प्रायश्चित करो, तुम भव्यजनों के लिए देव कल्प हो, इसलिए आदिनाथ के चरितभार को काव्य में निबद्ध करने के काम में अपना कन्धा दो'। 'महापुराण', मंत्री भरत के इसी अनुरोध का परिणाम है।

महाकवि पुष्पदंत फक्कड़ स्वाभिमानी और अत्यंत भावुक व्यक्ति थे। उन्होंने जिनभक्ति से प्रेरित होकर महापुराण की रचना की, आजीविका कमाने की दृष्टि से नहीं? वह अकेले थे, आजीविका के नाम पर उन्हें आश्रय और भोजन चाहिए था, उनके पास सृजन के सिवाय कुछ था भी नहीं और उन्हें कुछ जोड़ना भी नहीं था। भरत ने उन्हें सब कुछ दिया, पल पल उनकी देखभाल की व्यवस्था की, पुष्पदंत को और क्या चाहिए था? कवि के जीवन में जहाँ जिन चेतना और शिव चेतना का गहरा द्वन्द्व था, वहीं राग और विराग चेतना का भी। उनकी समूची रचना इन द्वन्द्वों से उद्वेलित

है। कवि को इसका अहसास है कि वह शृंगार वर्णन में कहीं कहीं सीमा का अतिक्रमण कर गया है—तभी महाकाव्य के अन्त में क्षमा मांगते हुए वह कहते हैं –

एत्थु जिणिदमग्गि ऊणाहिउ ।
बुद्धिविहीणे जं मइ साहिउ ।।
त महु खमउ तिलोयहुसारी ।
अरुहुग्गय - सुयएवि भडारी ।।

इस जिनेन्द्र-मार्ग में, बुद्धिहीन मुझ कवि पुष्पदंत ने जो कुछ कम अधिक कहा है, तीनों लोकों में श्रेष्ठ आदरणीय अरहन्त से उत्पन्न सरस्वती, उसे क्षमा करें।'

कवि को महापुराण की रचना में (९५९ से ९६५ ई. तक) कुल छह वर्ष लगे। एक बार ऐसी स्थिति आई कि कवि का मन उचाट हो गया। तब सरस्वती सपने में उसे समझाती है कि तुम पुण्यरूपी वृक्ष के लिए मेघ के समान हो, तुम सब विकल्प छोडकर अरहंत को नमस्कार करो। 'भरत आकर उसे समझाता है कि तुम्हें वाणीरूपी कामधेनु सिद्ध है उससे तुम नवरसरूपी दूध क्यों नहीं दुहते ?" कवि फिर, अपने सृजन में लगता है और महापुराण समाप्त करता है। इसके अतिरिक्त कवि की दो रचनाएँ और हैं, णायकुमारचरिउ और जसहरचरिउ जिन्हें उन्होंने भरत के पुत्र नन्न के आश्रय में रहते हुए, उसी शुभतुंग भवन में लिखा। इस प्रकार कुल १३ वर्ष तक उस भवन में रहकर कवि पुष्पदंत ने काव्य की साधना की। जसहरचरिउ उनकी अंतिम रचना है, और उसकी समाप्ति के कुछ समय बाद, धारानरेश सीयक ने आक्रमण कर, मान्यखेट को धूल में मिला दिया। मान्यखेट का वैभव धारानरेश की कोप-ज्वाला में ध्वस्त हो गया, राष्ट्रकूट वंश की गौरवगाथा विस्मृति के गर्भ में समा गई, 'शुभतुंग' भवन का भौतिक अस्तित्व मिट्टी में मिल गया। परन्तु उसमें

रहकर कवि ने वाणी रूपी कामधेनु से जिस बहिरंग और अंतरंग रस का दोहन किया, और उसे शान्त रस में समाहित किया वह, आज भी अपनी शुभ्रता और उत्तुंगता (शुभ्रतुंग) में प्रवाहित है।

इसमें संदेह नहीं कि पुष्पदंत भारत के उन छह महाकवियों (वाल्मीकि, व्यास, स्वयंभू, पुष्पदंत, तुलसी और सूर) में से एक हैं जिन्होंने पुराणकथा के माध्यम से भारत की आध्यात्मिक चेतना को समय के झंझावातों में सुरक्षित रखा।

शान्ति-निवास
११४ उषानगर, इन्दौर
२० अक्टूबर १९७५

—देवेन्द्रकुमार जैन

पूर्व संदर्भ

भरत-बाहुबली का आख्यान—नाभेयचरित का सबसे अधिक मर्मस्पर्शी आख्यान है। यह आख्यान दो भाइयो के द्वद्व का ही आख्यान नही है, अपितु व्यापक मानवीय सदर्भ मे, दो प्रवृत्तियो या मूल्यों के द्वन्द्व का एक ऐसा प्रवेगात्मक आख्यान है कि जिसे मानव जाति अपने इतिहास के प्रत्येक मोड पर दुहराती आ रही है।

भोगमूलक समाज में कर्म और श्रम, उत्पादन और वितरण वाली समाज-व्यवस्था और उसकी समस्याओ से मनुष्य अपरिचित था। भोगभूमि समाप्त होने पर, जब कर्मभूमि प्रारम्भ हुई तो मनुष्य के लिए पृथ्वी और सौरमडल के बीच, सब कुछ नया-नया और विचित्र लगा। सूर्य और चन्द्र का प्रकाश नया, वनस्पतियाँ नई, आजीविका अभिव्यक्ति और कर्म की नई-नई समस्याए? मनुष्य का अस्तित्व गहरे सकट मे था। अनेक समस्याओ से ग्रस्त, कर्ममूलक सृष्टि के उस आदिम युग मे, प्रथम तीर्थंकर ऋषभ ने नई समाज व्यवस्था की नीव डाली। वे स्वय उसके नियामक बने। वे अन्तिम कुलकर नाभिराजा के पुत्र थे, इसलिए उनका एक नाम नाभेय भी है, नाभि का पुत्र नाभेय। आध्यात्मिक सस्कृति के निर्माता और पथप्रदर्शक होने के कारण वे तीर्थंकर कहलाए। भौतिक और आध्यात्मिक जीवन के प्रथम शास्ता होने के कारण, उन्हे आदिनाथ के रूप मे भी अभिहित किया गया। ऋषभनाथ का एक नाम पुरुदेव भी है। और इस नाम की व्युत्पत्ति और अर्थ में विश्व मानव सस्कृति की भूली बिसरी स्थितियाँ और स्मृतियाँ छिपी हुई है, जो सिन्धु घाटी के उत्खनन से प्राप्त मानव सभ्यता के अवशेषो से उन्हें जोडती है।

ऋषभदेव की दो रानियाँ थी, यशोवती और सुनन्दा। पहली से भरत प्रमुख सौ पुत्र थे और पुत्री ब्राह्मी। दूसरी से दो संतानें

पूर्व संदर्भ

भरत-बाहुबली का आख्यान—आदिचरित का सबसे अधिक मर्मस्पर्शी आख्यान है। यह आख्यान दो भाइयों के द्वंद्व का ही आख्यान नहीं है, अपितु व्यापक मानवीय संदर्भ में, दो प्रवृत्तियों या मूल्यों के द्वन्द्व का एक ऐसा प्रतीकात्मक आख्यान है कि जिसे मानव जाति अपने इतिहास के प्रत्येक मोड़ पर दुहराती आ रही है।

भोगभूमिक समाज में कर्म और श्रम, उत्पादन और वितरण वाली समाज-व्यवस्था और उसकी समस्याओं से मनुष्य अपरिचित था। भोगभूमि समाप्त होने पर, जब कर्मभूमि प्रारम्भ हुई तो मनुष्य के लिए पृथ्वी और सौरमंडल के बीच, सब कुछ नया-नया और विचित्र लगा। सूर्य और चन्द्र का प्रकाश नया, वनस्पतियाँ नई, आजीविका, अभिव्यक्ति और कर्म की नई-नई समस्याएं ? मनुष्य का अस्तित्व गहरे संकट में था। अनेक समस्याओं से ग्रस्त, कर्ममूलक सृष्टि के उस आदिम युग में, प्रथम तीर्थंकर ऋषभ ने नई समाज व्यवस्था की नींव डाली। वे स्वयं उसके नियामक बने। वे अंतिम कुलकर नाभिराजा के पुत्र थे, इसलिए उनका एक नाम नाभेय भी है, नाभि का पुत्र नाभेय। आध्यात्मिक संस्कृति के निर्माता और पथप्रदर्शक होने के कारण वे तीर्थंकर कहलाए। भौतिक और आध्यात्मिक जीवन के प्रथम शास्ता होने के कारण, उन्हें आदिनाथ के रूप में भी अभिहित किया गया। ऋषभनाथ का एक नाम पुरुदेव भी है। और इस नाम की व्युत्पत्ति और अर्थ में विश्व मानव संस्कृति की भूली बिसरी स्थितियाँ और स्मृतियाँ छिपी हुई हैं, जो सिन्धु घाटी के उत्खनन में प्राप्त मानव सभ्यता के अवशेषों से उन्हें जोड़ती हैं।

ऋषभदेव की दो रानियाँ थीं, यशोवती और सुनन्दा। पहली से, भरत प्रमुख सौ पुत्र थे और पुत्री ब्राह्मी। दूसरी से दो संतानें

रहकर कवि ने वाणी रूपी कामधेनु से जिस बहिरंग और अंतरंग रस का दोहन किया, और उसे शान्त रस मे समाहित किया वह, आज भी अपनी शुभ्रता और उतुंगता (शुभतुंग) मे प्रवाहित है।

इसमे संदेह नही कि पुष्पदंत भारत के उन छह महाकवियो (वाल्मीकि, व्यास, स्वयंभू, पुष्पदंत, तुलसी और सूर) में से एक है जिन्होने पुराणकथा के माध्यम मे भारत की आध्यात्मिक चेतना को समय के झंझावातो मे सुरक्षित रखा।

शान्ति-निवास
११८ उषानगर, इन्दौर
२० अक्टूबर १९७५

—देवेन्द्रकुमार जैन

पूर्व संदर्भ

भरत-बाहुबली का आख्यान—नाभेयरश्मि का सबसे अधिक मर्मस्पर्शी आख्यान है। यह आख्यान दो भाइयों के द्वन्द्व का ही आख्यान नहीं है, अपितु व्यापक मानवीय संदर्भ में, दो प्रवृत्तियों या मूल्यों के द्वन्द्व का एक ऐसा प्रयोगात्मक आख्यान है कि जिसे मानव जाति अपने इतिहास के प्रत्येक मोड़ पर दुहराती आ रही है।

भोगमूलक समाज में कर्म और श्रम, उत्पादन और वितरण वाली समाज-व्यवस्था और उसकी समस्याओं से मनुष्य अपरिचित था। भोगभूमि समाप्त होने पर, जब कर्मभूमि प्रारम्भ हुई तो मनुष्य के लिए पृथ्वी और नीरनक्षत्र के बीच, सब कुछ नया-नया और विचित्र लगा। सूर्य और चन्द्र का प्रकाश नया, वनस्पतियाँ नई, आजीविका, अभिव्यक्ति और कर्म की नई-नई समस्याएं? मनुष्य का अस्तित्व गहरे संकट में था। अनेक समस्याओं से ग्रस्त, कर्ममूलक सृष्टि के उस आदिम युग में, प्रथम तीर्थंकर ऋषभ ने नई समाज व्यवस्था की नींव डाली। वे स्वयं उसके नियामक बने। वे अंतिम कुलकर नाभिराजा के पुत्र थे, इसलिए उनका एक नाम नाभेय भी है, नाभि का पुत्र नाभेय। आध्यात्मिक संस्कृति के निर्माता और पथप्रदर्शक होने के कारण वे तीर्थंकर कहलाए। भौतिक और आध्यात्मिक जीवन के प्रथम शास्ता होने के कारण, उन्हें आदिनाथ के रूप में भी अभिहित किया गया। ऋषभनाथ का एक नाम पुरुदेव भी है। और इस नाम की व्युत्पत्ति और अर्थ में विश्व मानव संस्कृति की भूली बिसरी स्थितियाँ और स्मृतियाँ छिपी हुई हैं, जो सिन्धु घाटी के उत्खनन से प्राप्त मानव सभ्यता के अवशेषों से उन्हें जोड़ती हैं।

ऋषभदेव की दो रानियाँ थीं, यशोवती और सुनन्दा। पहली से, भरत प्रमुख सौ पुत्र थे और पुत्री ब्राह्मी। दूसरी से दो सन्तानें

रहकर कवि ने वाणी रूपी कामधेनु से जिस बहिरंग और अंतरंग रस का दोहन किया, और उसे शान्त रस मे समाहित किया वह, आज भी अपनी शुभ्रता और उतुंगता (शुभतुंग) मे प्रवाहित है।

इसमे संदेह नही कि पुष्पदंत भारत के उन छह महाकवियो (वाल्मीकि, व्यास, स्वयंभू, पुष्पदंत, तुलसी और सूर) मे से एक है जिन्होने पुराणकथा के माध्यम से भारत की आध्यात्मिक चेतना को समय के झंझावातो मे सुरक्षित रखा।

शान्ति-निवास
११४ उषानगर, इन्दौर
२० अक्टूबर १९७५

—देवेन्द्रकुमार जैन

थी–बाहुबली और सुन्दरी । लम्बे शासन और भोगपूर्ण जीवन के बाद, ऋषभदेव सन्यास ग्रहण कर तप करने चले जाते है। दूसरे भाइयो की तरह बाहुबली भी पिता से उत्तराधिकार मे प्राप्त धन और भूमि से संतुष्ट थे। इक्ष्वाकु कुल-पुत्र होने के कारण–अपने राज्य की प्रभुसत्ता स्वाभिमान और अपने स्वत्वो की खातिर उनमे संघर्ष करने का अजेय शौर्य और साहस था। छल-कपट वाली क्षुद्र राजनीति के बजाय, वह सीधी लडाई और पुरुषार्थ मे विश्वास करते थे। अपनी प्रभुशक्ति और मानवी स्वतन्त्रता पर आँच आने पर वह अपने बडे भाई भरत से भी लोहा लेने से नही चूके। लेकिन उनके चरित की सबसे बडी विशेषता यह है कि विजय के उन्मादक क्षणो मे वे अपना संतुलन और विवेक नही खोते, उनका विरोध भाई से नही था, बल्कि सत्ता की उस राक्षसी भूख से था, जो दूसरो की स्वतन्त्रता छीनने के लिए मानवी रक्त बहाती है और मानवी मूल्यो और अधिकारो का अपहरण करती है। बाहुबली की यह महत्ता, विश्व इतिहास मे कभी नही दुहराई गई, दुहराई जाती तो अच्छा होता, (हालाकि इतिहास अपने को दुहराता रहता है) कि वह घर की फूट को राष्ट्र की फूट नही बनने देते, दुनिया मे ऐसा व्यक्ति शायद ही दूसरा हुआ हो, जिसने विजेता होकर, अपने हारे हुए भाई से क्षमा मांगी हो, उसके सम्मुख राज्य स्वीकार करने के प्रस्ताव किया हो, लेकिन बाहुबली ने ऐसा ही किया, क्योंकि वह बाहुबली ही नही, आत्मबली भी थे। सही अर्थ मे वह आत्मजयी थे। भरत पर विजय प्राप्त करने के लिए किया गया उनका द्वन्द्व प्रतीक द्वन्द्व था, जो यह बताने के लिए था कि सच्चा आत्मजयी अपने भौतिक अधिकार और स्वाभिमान, गलत ढग से छीने जाने की स्थिति मे आत्मसमर्पण करने के बजाय गलत शक्तियो के दाँत खट्टे करना पसन्द करता है। विजय के क्षणो मे बाहुबली अपने भाई भरत से जो कुछ कहते है, वह महज राजनैतिक औपचारिकता न होकर गहरे आत्ममथन से उपजी व्यथा है,

जिसमें मानव मुक्ति की आकांक्षा प्रतिबिम्बित है। यहाँ बाहुबली का आत्मबली रूप उभरता है और वह राजपाट परिवार छोड़कर जीवन के शाश्वत मूल्यों के साक्षात्कार के लिए पिता के पदचिन्हों पर चल देते हैं।

यह आश्चर्यजनक संयोग है कि जिस समय दक्षिण के कर्नाटक राज्य में स्थित श्रवण बेलगोला के निकट, विन्ध्यगिरि की पहाड़ी पर एक विशाल चट्टान को 'गोम्मटेश' के नाम से, बाहुबली के शरीर का आकार दिया जा रहा था, आज से लगभग एक हजार वर्ष पहले, तभी, महाकवि पुष्पदन्त, हैदराबाद के निकट राष्ट्रकूटों की राजधानी मान्यखेट में नाभेयचरित के बृहत् चरित में से बाहुबली के आख्यान को समकालीन सन्दर्भ में नया रूप दे रहे थे। पुष्पदन्त का समय—सामंतवादी सत्ताओं के संघर्ष का समय था, राजनैतिक विजय के उन्माद में सत्ता-पुरुष मानवीय और नैतिक मूल्यों को ताक पर रख चुके थे। समाज में छल-कपट और लूट-खसोट का बोलबाला था। मनुष्य को मनुष्य से खतरा था। बाहुबली का आख्यान लिखते समय, अपने समय की यह पृष्ठभूमि कवि के मन में थी, उसे लग रहा था कि भरत बाहुबली का द्वन्द्व, सामन्तवादी राजाओं का एकमात्र राजनैतिक लक्ष्य रह गया है, उसकी यह पीड़ा और समकालीन बोध उसके सर्जन में व्याप्त है, जिससे वह अत्यन्त सजीव और अनुभूतिपूर्ण हो उठा है। यह तथ्य संस्कृत में लिखित, प्रथम जैन पुराण आदि पुराण (आचार्य जिनसेन द्वारा लिखित) में वर्णित बाहुबली के आख्यान से तुलना करने पर स्वतः उजागर हो जाता है। पाठकों के तात्कालिक सन्दर्भ और तुलना के लिए, जिनसेनाचार्य के बाहुबलि आख्यान' का गद्यविवरण यहाँ संक्षेप में दिया जा रहा है। □

वाहुवलि-आख्यान (आचार्य जिनसेन के वर्णन का गद्य-सार)

दिग्विजय के वाद कैलाश पर्वत पर अपने पिता तीर्थंकर ऋषभ जिन की वदना भक्ति कर चक्रवर्ती भरत अयोध्या के लिए प्रस्थान करता है। अयोध्या मे स्वागत की तैयारी होने लगती है। दुल्हिन की तरह सजी हुई नगरी के मुख्य द्वार पर चक्रवर्ती का चक्र ठहर जाता है। जिस चक्र की किरणो के तेज को अच्छे से अच्छे सामतशूर नही सह सके थे, वही चक्र भरत को चकवर्ती वनाने की सभावना पर विराम चिह्न लगाता हुआ, खडा हो जाता है। भरत उनके मंत्री और सामत सोचविचार मे पड जाते है कि चक्ररत्न के गतिरोध का क्या कारण है? भरत, चक्रवर्ती के रूप मे अभिषिक्त होने के लिए व्याकुल है। जव उसे वताया जाता है कि उसे अपने ही भाइयो पर विजय पानी है, तो वह दूत के द्वारा भाइयो के पास अधीनता स्वीकार कर लेने का प्रस्ताव भेजता है। दूत से राजा भरत का सदेश सुनकर उसके निन्यानवे सगे भाई उसका सीधा विरोध नही करते। राजा भरत के प्रस्ताव के औचित्य को अस्वीकार करते हुए भी वे इस वारे मे अतिम फैसला अपने पिता आदिनाथ पर छोड देते है। उनका तर्क है कि चूंकि भूमि और राज्य, पिता के द्वारा प्रदत्त है, इसलिए उनकी अनुमति के विना कुछ भी करने की स्थिति में वे अपने को नही पाते। और इसलिए उन्हे छोड-कर किसी दूसरे को प्रणाम करने का प्रश्न उनके सम्मुख नही है। इसका कोई कारण भी नही है। भरत के प्रस्ताव मे उन्हे उसके अहकार की 'बू' आती है। उनका एक तर्क यह भी है कि वे

जब समय तक अपने पिता ऋषभनाथ के अनुशासन मे रहे है, उन्हीं के लिए वे प्रणत हुए है. ऐसी स्थिति मे राज्य या जीवन के मोह से किसी दूसरे को प्रणाम करने से, ऋषभ के प्रति उनकी निष्ठा कलंकित होगी। वे कैलाश पर्वत पर जाकर तीर्थंकर ऋषभ के समक्ष अपना निवेदन प्रस्तुत करते हुए, यही इच्छा व्यक्त करते है कि अब किसी दूसरे के (चाहे वह उनका बड़ा भाई ही क्यो न हो) भौतिक अनुशासन मे रहने के बजाय, वे अपने पिता के आध्यात्मिक अनुशासन मे रहेगे। वे ऋषभ जिनेंद्र के चरणो की भक्ति की कामना करते है। तीर्थंकर ऋषभ अपने विस्तृत प्रवचन मे भौतिक सुख, शक्ति और सत्ता की निस्सारता बताते हुए उन्हे यही परामर्श देते है कि भौतिक राज्य की तुलना मे आत्मा के राज्य मे रहना ही हितकर है। इस आत्मतप रूपी राज्य मे दूसरो की आराधना नही करनी पड़ती। तुम धर्मरूपी महावृक्ष के आश्रय मे रहो, जिसका दयारूपी फूल कभी नही मुरझाता, इसमे लगा मुक्तिरूपी फल कभी नष्ट नही होता, इसमे दूसरो की आराधना करने की हीनता नही है, तपश्चरण मे ही तुम्हारा सच्चा स्वाभिमान सुरक्षित है। दीक्षा इसकी रक्षा करती है, दया वनिता की तरह इसे प्यार से रखती है'। पिता का उपदेश सुनकर भरत के भाई दीक्षा ग्रहण कर लेते है। आचार्य जिनसेन उनकी तपस्या का विस्तृत वर्णन करते है; परन्तु इससे भरत के चक्र के नगर-प्रवेश करने की समस्या का हल नही होता, क्योकि अपने वाहुओ का गर्व करने वाला वाहुवली, न तो भरत की अधीनता स्वीकार करता है और न, दूसरे भाइयो की तरह दीक्षा ग्रहण करता है। भरत को विश्वास है कि वह विवेकशील और समझदार है इसलिए, उसका प्रस्ताव मान लेगा। भरत बुद्धिमान् मंत्रियो को वाहुवली के पास भेजता है। वे दूत का प्रस्ताव ठुकरा देते है। दूत की चिकनी चुपडी बातो धमकियो और नीतिवाक्यो का उन पर कोई असर नही होता। भरत का प्रस्ताव न मानने मे वाहुवली का मुख्य तर्क यह है कि अग्रज होने से भरत

पूज्य है, परतु एक राजा के रूप, मे तलवार के वल पर जब वह अपनी सत्ता थोपना चाहता है तो उसका प्रतिकार करना ही न्याय सगत है। वे दूत मे कहते है कि जिस पारिवारिक एकता की दुहाई देकर भरत मुझे दबाना चाहता है, वह उसका छल है। क्या पारिवारिक मेलमिलाप के लिए भरत का कुछ कर्तव्य नही है? पिता ने दोनो को राजा बनाया है मुझे इससे कोई सरोकार नही कि भरत राजराज बन गया है, मै अपने भुजबल से रक्षित और पिता से प्राप्त राज्य मे सतुष्ट हूँ।" बाहुबलि के उत्तर से स्पष्ट है कि वह एक राजा के रूप म भरत की सत्ता-विस्तार की नीति का विरोधी है। इसलिए वह उसकी कटु आलोचना करता है। दूत के लौटने पर, बाहुबलि की सेना मे युद्ध की तैयारी शुरू हो जाती है। आचार्य जिनसेन सैनिको और पोदनपुर की स्त्रियो की प्रतिक्रियाओ का विस्तार मे वर्णन करते है।

इधर सेनाओ के साथ बाहुबलि युद्धभूमि मे पहुँचते है, और भरत भी भयकर नगाडो के कोलाहल के बीच प्रस्थान करता है। आचार्य जिनसेन राजाओ और सेना के प्रस्थान का, विस्तार से वर्णन करते है। दोनो सेनाएँ आमने सामने युद्ध के लिए सनद्ध है, परतु वृद्धमत्रियो के परामर्श पर दोनो भाई द्वद्वयुद्ध के लिए तैयार हो जाते है। एक के बाद एक, जलयुद्ध, दृष्टियुद्ध और मल्लयुद्ध मे पराजित होने पर चक्रवर्ती भरत छोटे भाई पर चक्र छोडता है। चक्र बाहुबली की प्रदक्षिणा कर उनके पास ठहर जाता है। द्वन्द्वयुद्ध को देखने वाले राजाओ की प्रशसाओ और सैनिको के जय जयकार के बीच एक क्षण के लिए बाहुबली अपनी विजय मे प्रसन्न होते है, परन्तु दूसरे ही क्षण वह भाई के हीनव्यवहार को देखकर ग्लानि मे भर उठते है, सत्ता की असारता और संसार की क्षण-भगुरता उन्हे कचोटती है। वे भाई से कहते है—

'मृप्यता च तदस्माभि कृतमागो यदीशदृम्'

हमने जो इस प्रकार का अपराध किया है, उसे आप क्षमा करें।" भरत भी पश्चात्ताप करता है। अपने पुत्र महाबली को राज्य सौंपकर बाहुबली ने दीक्षा ले ली। प्रतिमायोग में स्थित वह, पत्रविहीन विशाल वृक्ष के समान प्रतीत होते थे। आचार्य जिनसेन बाहुबली की तपस्या का विस्तृत विवरण देते हैं। वर्ष भर का उपवास पूरा करने पर भरत चक्रवर्ती आकर तपस्वी बाहुबली की पूजा करता है, इसी समय बाहुबली का यह शल्य कि मैंने भरत को संताप पहुंचाया" दूर होती है और वह केवलज्ञान प्राप्त करते हैं। चक्रवर्ती भरत अन्तःपुर के साथ मुनिराज बाहुबली की वंदना करता है और अंत में वे मोक्ष प्राप्त करते हैं। □

अनुक्रमणिका

सन्धि १६

सन्धि १७

सन्धि १८

बाहुबली आख्यान

यह आख्यान अपभ्रंश के महान् कवि पुष्पदन्त के महापुराण का अंश है। महापुराण में जो महत्त्व नाभेयचरित का है नाभेय-चरित में वही महत्त्व इस आख्यान का है। इसमें व्यक्ति परिवार और राज्य के सन्दर्भ में उन प्रश्नों का हल खोजा गया है कि जो मानव जीवन के शाश्वत् प्रश्न हैं, अपने समय की सामन्तवादी पृष्ठभूमि पर पुष्पदन्त ने जिस तरह इन प्रश्नों का काव्यात्मक हल खोजा है, उससे यह आख्यान अत्यन्त सजीव और हृदयग्राही हो उठा है।

अनुक्रमणिका

सन्धि १६

सन्धि १७

सन्धि १८

बाहुबली आख्यान

यह आख्यान अपभ्रंश के महान् कवि पुष्पदन्त के महापुराण का अश है। महापुराण मे जो महत्त्व नाभेयचरित का है नाभेय-चरित मे वही महत्त्व इस आख्यान का है। इसमे व्यक्ति परिवार और राज्य के सन्दर्भ मे उन प्रश्नो का हल खोजा गया है कि जो मानव जीवन के शाश्वत् प्रश्न है, अपने समय की सामन्तवादी पृष्ठभूमि पर पुष्पदन्त ने जिस तरह इन प्रश्नो का काव्यात्मक हल खोजा है, उससे यह आख्यान अत्यन्त सजीव और हृदयग्राही हो उठा है।

अज्जवु पसु पडियउ पलाविए ।
अमुणियहियय चारुगरुयत्तें
कलहसीलु भण्णइ सुहडत्तें ।
महुरपयपिरु चाडुयगारउ
केम वि गुणि ण होइ सेवारउ ।

घत्ता–अइतिक्खहु धम्मगुणुज्झियहं वम्मवियारणवसणहं ।।
को वाणहं संमुहु थाइ रणे को महिवइघरि पिसुणहं ।।८।।

९

मानव जीवन का महत्त्व –

आरणाल–अहवा तेहिं किं हय ज समागय दुल्लहं णरत्त ।
तं जो विसयविसरसे घिवइ परवसे तस्स किं वुहत्त ।।१।।

कंचणकंडें जंवुउ विंधइ
मोत्तियदामें मंकडु वधइ ।
खीलयकारणि देउलु मोडइ
सुत्तणिमित्तु दित्तु मणि फोडइ ।
कप्पूरायरुक्खु णिसुंभइ
कोद्दवछेत्तहु वइ पारंभइ ।
तिलखलु पयइ डहिवि चंदणतरु
विसु गेण्हइ सप्पहु ढोयवि करु ।
पीयइ कसणइं लोहियसुक्कइं
तक्कें विक्कइ सो माणिक्कइं ।
जो मणुयत्तणु भोएं णासइ
तेण समाणु हीणु को सीसइ ।
चित्तु समत्तणि णेय णियत्तइ
पुत्तु कलत्तु वित्तु संचितइ ।

रहने पर पशु और पण्डित होने पर प्रलाप करने वाला, अपने हृदय सीधा की सुन्दर गुरुता को न समझने वाली शूरवीरता से कलहशील कहा जाता है और मीठा बोलने पर चापलूस। इस प्रकार सेवा मे रत व्यक्ति किसी भी प्रकार गुणी नही होता।

घत्ता—अत्यन्त तीखे धर्मरूपी (गुण से रहित, डोरी से) रहित, वम्म (मर्म-कवच) के विदारण के स्वभाववाले बाणो के सम्मुख रण मे, और दुष्टो के सम्मुख राजा के घर में कौन खडा रह सकता है ॥८॥

९

मानव जीवन का महत्त्व

अथवा उनसे क्या, जिन्होने प्राप्त दुर्लभ मनुष्यत्व को नष्ट कर दिया और जो उसे परवश होकर नष्ट करता है, उसका क्या पाण्डित्य? वह स्वर्ण के तीर से सियार को वेधता है, मोती की माला मे बन्दर को बांधता है, कील के लिए देवकुल को तोडता है, सूत्र के लिए दीप्त मणि को फोडता है, कपूर और अगुरु वृक्षो को नष्ट करता है और (उनसे) कोदो के खेत की वागर वनाता है। चन्दनवृक्ष को जला कर तिल खलो की रक्षा करता है। सांप को हाथ में लेकर उसमे विष ग्रहण करता है, पीले, काले, लाल और सफेद मणियो को छाछ में वेचता है, जो मनुष्यत्व को भोग मे नष्ट करता है, उसके समान हीन व्यक्ति कौन कहा जाता है। जो अपने चित्त को समता में नियोजित नही करता, पुत्र-कलत्र और धन को

मरइ रसणफंसणरसदड्ढउ
मे मे मे करंतु जिह् मेंढउ।
खज्जइ पलयकालमद्दूलें
डज्झइ दुक्खहुयासणजालें।
मंजरु कुंजरु महिसउ मंडलु
होइ जीउ मक्कडुमाहुंडलु।

घत्ता–केलासहु जाइवि तवयरणु ताए भासिउ किज्जइ ॥
जेणेह सुदूसहतावयरि संसारिणि तिस छिज्जइ ॥९॥

१०

भरत के भाइयो के द्वारा दीक्षा ग्रहण

आरणालं–इय भणियं कुमारया मारमारया समरमा,पसण्णा।
दरिवियरियवराहयं सवरराहयं काणण पवण्णा ॥१॥

दिट्ठु तेहिं केलासि जिणेसरु
संथुउ रिसहणाहु परमेसरु।
जय रिसिणाह वसह वसहद्धय
जय तियसिदमउलिलालियपय।
जय जाणियपरमक्खरकारण
जय जिण मोहमहातरुवारण।
जय सुहवास दुरामावारण
जय समहरत्तिपवारिणिवारण।
पुणु वि पंच परमेट्ठि णवेप्पिणु
पचमुट्ठि सिरि लोउ करेप्पिणु।
पंचमहारिसिवयइं लएप्पिणु
पंचासवदाराइं पिहेप्पिणु।
पंचिंदियपमाउ वज्जेप्पिणु

चिन्ता करता है, रसना और स्पर्श रस मे दग्ध होकर उसी प्रकार मर जाता है, जिस प्रकार मे-मे-मे करता हुआ मेंढक मरता है । वह प्रलयकाल रूपी सिंह के द्वारा खाया जाता है, दुःख रूपी आग की ज्वाला मे जला दिया जाता है । यह जीव मार्जार, कुंजर, महिष, कुक्कुर, बन्दर और सर्प विशेष उत्पन्न होता है ।

घत्ता—पिता के द्वारा कहे गये तप को कैलास पर्वत पर जाकर करना चाहिए, जिसके कारण अत्यन्त सन्तापकारी संसार के प्रति तृष्णा क्षीण होती है ॥९॥

१०

भरत के भाइयो के द्वारा दीक्षा ग्रहण

यह कह कर काम को मारने वाले उपशमरूपी लक्ष्मी के धारक और प्रसन्न कुमार, जिसकी गुहाओ में वराह विचरण करते है और जो शबरो की शोभा से युक्त है ऐसे वन मे चले गये । उन्होने कैलास पर्वत पर जिनेश्वर के दर्शन किये और ऋषभ की स्तुति की—"हे वृषभध्वज, आपकी जय हो । देवेन्द्रो के मुकुटो से ललितचरण आप की जय हो । परम अक्षय पद के कारण जाननेवाले आपकी जय हो । मोह रूपी महावृक्ष का निवारण करने वाले हे जिन आपकी जय हो । मुख में वास करनेवाले दुराशा का निवारण करनेवाले आपकी जय हो । चन्द्रमा के समान श्वेत छत्र वाले आपकी जय हो ।" फिर पांच परमेष्ठियो को नमस्कार कर, पांच मुट्ठी केशलोच कर, पांच महामुनियो के पांच महाव्रत लेकर आस्रव के द्वारो को रोककर

पंच वि सर मयणहु तज्जेप्पिणु।
पंचायारसारु पावेप्पिणु
पंचपंचविहु धम्मु धरेप्पिणु।

घत्ता—दढगुणि मणमग्गणु सणिहिउ मोक्खहु समुहु पेसिउ ।।
संतहि अरहंतहु तणुरुहहिं अप्पउ चरिएं भूसिउ ।।१०।।

११

दूतों का भरत से प्रतिवेदन

आरणालं—ता पत्तो चरो पुरं णिवइणो घरं भणइ सुणसु राया।
इसिणो तुह सहोयरा सीलसायरा अज्जु देव जाया ।।१।।

एक्कु जि पर बाहुबलि सुदुम्मइ
णउ तउ करइ ण तुम्हहं पणवइ।
तं णिसुणेवि पुरोहें उत्तउ
भडसामंतमंतिसत्तउ।
कोसु देसु परियणु पयभत्तउ
मणहरु अंतेउरु अणुरत्तउ।
कुलु छलु बलु सामत्थु सुइत्तणु
णिहिलजणाणुराउ जसकित्तणु।
विणउ वियारहारि बुहसंगमु
पोरिसु बुद्धि रिद्धि दइवुज्जमु।
कुंजर णावइ महिहर जंगमु
अत्थि तासु रह करह तुरंगमु।
अत्थमत्थु जावज्ज वि ण मरइ

पाँच इन्द्रियो के प्रमादो को छोडकर, कामदेव के बाणों को त्यागकर, पाँच आचार श्रेष्ठो को पाकर, दस प्रकार के धर्मो को धारण कर—

घत्ता—मन रूपी तीर को दृढ गुण (गुण डोरी) में रखकर मोक्ष के सम्मुख प्रेपित किया। इस प्रकार अरहन्त ऋपभ के सन्त पुत्रों ने आत्मा को चारित्र से विभूपित किया ॥१०॥

११

दूतो का भरत से निवेदन

तब दूत राजा भरत के घर आया और बोला—"हे राजन् सुनो, शील के सागर तुम्हारे भाई, हे देव आज ही मुनि हो गये हैं एक बाहुबलि ही अत्यन्त दुर्मति है, न तो वह तुम्हें प्रणाम करता है और न तप करता है।" यह सुनकर पुरोहित ने भटो, सामन्तो और मन्त्रियो के लिए उपयुक्त यह कहा, उनके (बाहुबलि के) पास कोश, देश, पदभक्त परिजन, सुन्दर अनुरक्त अन्त.पुर, कुल, छल-बल, सामर्थ्य, पवित्रता, निखिलजनो का अनुराग, यशकीर्तन, विनय, विचारशील बुधसंगम, पौरुप, बुद्धि, ऋद्धि, देव, उद्यम, चलते-फिरते पहाड की तरह हाथी। रथ, करभ और तुरंगम हैं। जब तक वह अर्थशास्त्र का स्मरण नही करता।

जाम सहायसहासइं ण करइ ।
जाम ण लग्गइ खलसंसग्गे
खत्तधम्मणिम्महणुम्मग्गे ।

घत्ता–जावज्ज वि चाउ ण करि धरइ तोणाजुयलु ण बंधइ ।।
णिम्मज्जिए भालसेयलवहिं जाम ण गुणि सरु संधइ ।।१।।

१०

वाहुवली के पास दूत भेजना:–

आरणाल–ण हु मारइ महाहवे जा महाहवे दाइओ समत्थो ।
जा ण हरइ णिराउलं तुह महीयल तिक्खखग्गहत्थो ।।१।।

ताम तासु दूयउ पेसिज्जइ
जइ पइ पणवइ तो पालिज्जइ ।
णं तो पुणु वाहुवलि धरिज्जइ
बंधिवि कारागारि णिहिज्जइ ।
एम मंतु ज तेण पउंजिउ
ता राए तहु दूउ विसज्जिउ ।
णियवइरत्तु सत्तुविद्धंसणु
सुहडु सुलक्खणु सोमु सुदंसणु ।
देसजाइकुलसुद्धु पसिद्धउ
पढिउ पटु वहुलरिद्धिसमिद्धउ ।
विविहविसयभासाभामिल्लउ
दिट्ठुत्तरु महिमाइ महल्लउ ।
नेयवनु रंजियपहुतेयउ
महुरवाणि आदेउ अजेयउ ।
गउ दूयउ परिचोइयपत्तउ
पोयणपुरु वहुदिवसहि पत्तउ ।

और जबतक सैकडो सहायकों को नहीं बनाता, जबतक दुष्टों की सगति और क्षात्र धर्म के निर्मूल के मार्ग में नहीं लगता।

घत्ता—जब तक वह धनुष हाथ में नहीं लेता, तरकस युगल को नहीं बांधता और भाल तथा कान तक निमज्जित होने वाली डोर पर तीर का सन्धान नहीं करता ॥११॥

१२

वाहुबली के पास दूत भेजना

जब तक महायुद्ध में समर्थ शत्रु तुम्हें महायुद्ध में नहीं मारता और जब तक तीखी तलवार हाथ में लिए हुए वह तुम्हारी निराकुल धरती का अपहरण नहीं करता, तब तक उसके पास दूत भेजा जाये। यदि वह प्रणाम करता है तो उसका पालन किया जाय, नहीं तो फिर बाहुबली को पकड लिया जाये और बांधकर कारागार में डाल दिया जाये।" जब उसने (पुरोहित ने) यह मन्त्रणा दी तो राजा ने उसके पास दूत भेजा। वह दूत अपने स्वामी में अनुरक्त शत्रु का विध्वंस करने वाला सुभट, सुलक्षण, सौम्य, सुदर्शन, देश जाति और कुल से शुद्ध, प्रसिद्ध पण्डित, चतुर स्वामी के ऐश्वर्य से समृद्ध विविध विषयों पर विविध भाषाओं को बोलने वाला, जिसने उत्तर देख लिया है, ऐसा महिमादि से महान् तेजस्वी, स्वामी का तेज रखने वाला, मधुर वाणीवाला, आदरणीय और अजेय दूत, अपने वाहन को चलाकर गया और बहुत दिनों में पोदनपुर पहुँचा।

जहिं वणतरुसाहहिं महु वियलइ
चलकंकेल्लीपल्लवु विलुलइ ।
अइदोहरपवाससममहियहिं
पइसंतहिं वि समत्तहिं पहियहिं ।
रसविसेसधारामहमहिइं
जहिं खज्जंति फलाइं सुरहियइं ।
पुप्फहिं गुप्फइ माल विहिंडिर
चउदिसु रुणुरुणंति इंदिंदिर ।

घत्ता—सरु मेल्लिवि करेण णियड्ढियउ रत्तु पवड्ढुलु रसियउ ।
बिंबीफलु अहरु व वणसिरिहे जहिं कणइल्लें डसियउ ।।१२।।

१३

पोदनपुर का वर्णन —

आरणाल—वरकेदारदारए सालिसारए कसणधवलपिच्छा ।
अणुझणझणियघणकण कणिसमणुदिण जहिं चुणंति रिच्छा ।।१।।

णिद्धणत्तु जहिं चदें दाविउ
माणुसि कत्थइ णेय विहाविउ ।
जहिं विहारु पासाउ पियारउ
णउ णारियणकट्ठु रइगारउ ।
उववासु वि चडएण रइज्जइ
णउ रोएं दुक्कालि किज्जइ ।
जहिं केण वि कीरइ ण सुरागमु
होइ गुणीण गुणेंहिं सुरागमु ।
दिट्ठु मिहाछेउ वि रिसिदिक्खहि
णउ माणिक्कमऊहपरिक्खहि ।
अमिलाहवन्तु जहिं लेप्पइ

जहाँ वन वृक्षो की डालो से मधु झरता है, चचल अशोक वृक्ष का पल्लव हिलता है, जहाँ अत्यन्त लम्बे प्रवास के श्रम से थके हुए प्रवेश करते हुए समस्त राहगीरो के द्वारा, रस विशेष की धाराओ मे महकते हुए सुरभित फलो को खाया जाता है, जहाँ फूलों से मालाएँ गूँथी जाती है, जहाँघूमते हुए भ्रमर चारो दिशाओ में गुनगुना रहे है।

घत्ता--जहाँ वन लक्ष्मी के अधर के समान, लाल, मीठे प्रवचित कुदरु फलो को, शब्द करके, चोच मे खीचकर तोते ने दर्शित कर दिया है।

१३

पोदनपुर का वर्णन

धान्य के श्रेष्ठ खेतो के मार्ग मे काले और सफेद बाल वाले रीछ झनझनाते हुए सघन कणो वाले धान्य को प्रतिदिन चुगते है। जहाँ निर्धनता (स्निग्धत्व) चन्द्रमा के द्वारा दिखायी जाती है मनुष्य में निर्धनता दिखाई नही देती। जहाँ विहार शब्द प्रसादो में प्रिय कारक होता है, प्रेम उत्पन्न करने वाला नारीजन के कण्ठ विहार (हार रहित) नही है। जहाँ चटक के द्वारा (गौरैया) उपवास (गृहो के भीतर वास) किया जाता है, वहाँ के लोग रोग और दुष्काल के कारण उपवास नही करते। जहाँ किसी के द्वारा सुरागम नही किया जाता (मदिरापान), गुणियो के गुणो से सुरागम (देवागम) होता है। जहाँ मुनिदीक्षा में ही शिखाउच्छेद होता है। माणिक्यो की किरण (तेज) परीक्षा मे आग से उच्छेद नहीं होता। जहाँ भित्ति (लेप) में असिलाहव (अमूर्त से उत्पन्न) रूप होता है, किसी मारण विशेष में (हत्या विशेष में) असि (तलवार) का लाघवरूप नही होता। जहाँ वन और यौवन सदैव नए रूपो को

णउ विसिट्ठमारणसकप्पइ ।
वहइ नया णवत्तु वणु जोवणु
णउ णिरुवद्दउ णिवसंतउ जणु ।
जेत्थु कुसाढूसणु णीसंगइ
णासवारि णउ रायवयं गइ ।
थद्धत्तणु णिवडणु थणउत्लइ
धरणु णिपीडणु जहिं अहरुल्लइ
घत्ता—पुक्खरिणिहिं कीलागिरिवरहिं जलखाइयपायारहिं ।।
जं सोहइ मोत्तियतोरणहिं मंडिउ चउहुं मि दारहिं ।।१३।।

१४

दूत का राजभवन में प्रवेश

आरणाल—तहिं सुरगुरुमुलयओ रायदूयओ पट्टणे पइट्ठो ।
रायालयदुवारए हिययहारए णायरेहिं दिट्ठो ।।१।।

कणयदंडयरु भरलउ भाविउ
तहिं पडिहारु तेण बोल्लाविउ ।
बुद्धिवंतु अच्चब्भुयभूयउ
भणु अच्छइ दुवारि पहुदूयउ ।
तं णिसुणिवि गउ लट्ठिविहत्थउ
कहइ कुमारहु पणमियमत्थउ ।
अच्छइ दारि णरिंदवओहरु
अत्थि णत्थि भणु सामिय अवसरु ।
ता कंदप्पें भणिउ म वारहि
भायरकिंकरु लहु पइसारहि ।
ता कट्ठियहरेण जर्मणिम्मनु
पइसारिउ पणयमुहमंडलु ।

किसी के विशिष्ट मारण की सकल्पना मे अभिलाषन नही होता जहा वन सदर नवत्व और यौवन धारण करते है, वहाँ विना किसी उपद्रव के साथ रहनेवाले जन नवत्व को धारण नही करते । जहाँ अनासग (मुनियो) के लिए कुगाद्दूपण (पृथ्वी और लक्ष्मी का दूषण (धरती और लक्ष्मी का दूषण) नही है । जहाँ स्तनो मे सघनता और पतन है, और अधरो में धारण कियाजाना और निष्पीडन है। वहाँ के लोगो मे ये बाते नही है।

घत्ता—जो पुष्करिणियो, क्रीडागिरिखरो, जलखाइयो, प्राकारो तथा मोतियो के तोरणवाले चारो द्वारो मे अलकृत शोभित है ॥१३॥

१८

ऐसे उस पोदनपुर नगर मे बृहस्पति के समान रूपवाला, प्रवेश करता हुआ राजदूत राज्यालय के सुन्दर द्वार पर लोगो के द्वारा देखा गया। वहाँ स्वर्णदण्ड धारण करनेवाले सुन्दर विचारशील आश्चर्य चकित एव बुद्धिमान् प्रतिहारी से वह बोला, "राजा से कहो कि द्वार पर प्रभु का दूत खडा है।" यह सुनकर लाठी हाथ मे लिये हुए मस्तक से प्रणाम कर प्रतिहारी कुमार से कहता है, 'द्वार पर राजा का दूत स्थित है, हे स्वामी अवसर है 'हाँ-ना' कुछ भी कह दे।" तब कामदेव बाहुबली ने कहा, "मना मत करो। भाई के अनुचर को शीघ्र प्रवेश दो।" तब यष्टि धारण करने वाले प्रतिहारी ने यश से निर्मल प्रसन्न मुखमण्डल दूत को प्रवेश दिया।

बाहुवलीसु देउ कयमंडलु
दूए दिट्ठउ ण आहुडलु ।
संथुउ मउलियपंजलिपोमें
को वसि ण कियउ तुह परिणामें ।

घत्ता–तुह धणुगुणटकारएण केण ण माणु णिहित्तउ ।।
पइ वम्मह पचहिं मग्गणहिं सयलु वि तिहुयणु जित्तउ ।।१४।।

१५

दूत द्वारा कामदेव वाहुवलि की प्रशंसा

आरणाल–पियवयणं पि भासियं सुइसुहासियं भुत्तकामभोया ।
तुह जयवडहसद्देण जगविमद्देण णउ सुणंति लोया ।।१।।

जय कुसुमाउह रइरमणीवर
अलिमालाजीयासंधियसर ।
पइं पेच्छिवि घोलइ उप्परियणु
वियलइ णारिहिं णीवीवधणु ।
चिहुरभारु दढवधु वि पसिढिलु
हवइ रयवु सवइ सोणीयलु ।
चलइ वलइ लोयणजुयलुल्लउ
दीसइ अंगु वूढसेउल्लउ ।
रंभा णवरंभा इव डोल्लइ
रइवाएं आहल्ल व हल्लइ ।
देव तिलोत्तिम तिलु तिलु खिज्जइ
विरहें उव्वसि उव्वेइज्जइ ।
मेणइ मीणि व थोवइ पाणिइ
पिय संतप्पइ रवियरमाणिइ ।

सभा के बीच बैठे हुए बाहुबलीश्वर को दूत ने इस रूप मे देखा मानो वह इन्द्र हो। हस्तकमलो की अंजलि जोडकर उसने संस्तुति की--"तुमने अपने परिणाम से किस को वश में नही कर लिया।"

घत्ता--तुम्हारी धनुष-डोरी की टंकार से किसने मान नही छोड़ दिया। हे कामदेव, तुमने अपने पाँच ही तीरो से समस्त त्रिलोक को जीत लिया ॥१४॥

१५

जिन्होने कामभोगो का सेवन किया है, ऐसे लोग, श्रुतियो (कानो) को अच्छे लगने वाले कहे गए प्रिय वचन, और विश्व का विमर्दन करने वाले तुम्हारे विजय के नगाडे के शब्द को नही सुनते। हे पुष्पायुध और रतिरूपी रमणी की, भ्रमरमाला की डोरी पर सरो का सधान करने वाले हे आपकी जय हो। आपको देखकर नारी का ऊपर का वस्त्र हिल उठता है और नीवी बधन खुल जाता है, मजबूती से बधा हुआ भी केशबधन ढीला पड जाता है, रजस्राव होने लगता है और कटितल खिसक जाता है; नेत्र युगल चचल हो उठता है और मुडता है। शरीर पसीना-पसीना हो जाता है, रम्भा, नवरंभा (कदली) की तरह हिल उठती है, गति की हवा से वह और अधिक कांप उठती है। हे देव तिलोत्तमा तिल-तिल खेद को प्राप्त होती है, उर्वशी विरह से उद्विग्न हो उठती है, प्रिय मेनका सूर्य की किरणो से सन्तापित थोड़े पानी में मछली की तरह सतप्त हो उठती है,

एम थुणतहु दिण्णउं आसणु
णिवसणु भूसणु किउ सभासणु ।
हिमइरिजलहिमज्झि महिरायहु
कुसलु खेउं भरहहु मह्हु भायहु ।
कुसलु खेउं कुरुवसणरेसहु
कुसलु खेमु जलहरणिग्घोसहु ।
कुसलु खेमु णमिविणमिकुमारहु
कुसलु खेउ पत्थिवपरिवारहु ।
दूवें वुत्तउ कुसलु णरिंदह
कुसलु णाह णिहिलहु णिवविंदहु ।
एक्कुजि अकुसलु सुहिउक्कंठिउ
जं तुहु देव दूरि परिसंठिउ ।

घत्ता–दूरत्थहं बंधुहुं णेहु जइ णासइ पिसुणकयतरु ।।
रवि मेल्लइ किरणइं पंकयह ताइं णिवारइ जलहरु ।।१५।।

१६

दूत का चातुर्यपूर्ण कथन

आरणालं–भो भो दणुयणिम्महा सुणसु वम्महा कुणसु चारुचित्त ।
सह गुरुएण भाइणा तिजगताइणा रूसिउ ण जुत्त ।।१।।

को समहरु को किर करमेलउ
को समुद्दु को जलकल्लोलउ ।
को तुहु भरहु कवणु किर वुच्चइ
एहउ वुहह वियप्पु ण रुच्चइ ।
कप्परुक्खु कि कुसुमहिं अच्चमि
रयणायरु करयलिणें सिंचमि ।
सूरहु अग्गइ दीवउ बोहमि
हउं गिहीणु किं पइं मबोहमि ।

"इस प्रकार स्तुति करते हुए दूत को (बाहुबलि ने) आसन आवास और अलकार आदि दिए तथा बात की"। हिमालय से लेकर समुद्रपर्यंत, मेरे भाई महाराज भरत का कुशलक्षेम तो है। कुरुवंश के राजा का क्षेम तो है, मेघ के समान घोष वाले राजा का भी क्षेम है।" नमि और विनमि कुमार का क्षेम तो है, राजपरिवार का क्षेम तो है। दूत ने कहा—"समस्त राजासमूह का हे स्वामी कुशलक्षेम है। सुधीजनो को उत्कठित करने वाला एक ही अकुशल है कि हे देव जो आप बहुत दूर स्थित है।

घत्ता—दुष्टो के द्वारा अन्तर पैदा कर देने पर दूरस्थ भाइयो का स्नेह नष्ट हो जाता है, सूर्य कमलो के लिए किरणें भेजता है परन्तु जलधर उनका निवारण कर देता है ॥१५॥

१६

दूत का चातुर्यपूर्ण कथन —

हे दानवो को नष्ट करने वाले कामदेव, सुनो और अपना चित्त सुन्दर बनाओ। त्रिलोक को सताने वाले अपने बड़े भाई से रूठना ठीक नहीं। चन्द्रमा कौन और उसकी किरणो का समूह कौन ? समुद्र कौन और उसकी जलतरगें कौन ? तुम कौन और भरत कौन ? पण्डितो को यह विकल्प (या भेदभाव) अच्छा नहीं लगता। क्या मैं कल्पवृक्ष की फूलो से पूजा करूँ ? क्या समुद्र को हाथ से सींचूँ ? क्या सूर्य के आगे दीप जलाऊँ, मै हीन हूँ तुम्हें क्या ? सम्बोधित करूँ ?

तायहु अच्छइ भरहु जि राणउ
तुहुं जुयराउ जगेक्कपहाणउ ।
माण मरट्ट विसट्ट मुएप्पिणु
जीवहु एक्कमेक्क अणुणेप्पिणे ।
तरणिकठकंटइयपवट्ठहि
अरिवरदंतिदंतपरिहट्ठहि ।
आयड्ढियपईहकोदंडहि
आलिंगियउ जेहिं भुयदंडहिं ।
तेहिं ण पुणरवि रणि जुज्झिज्जइ
गुरुयणि अविणएण लज्जिज्जइ ।
घत्ता—कुलसामि महावलु सुयणु गुणि णउ णवंति जे राणउ ।।
घरि ताहं होइ दालिद्दडउ अह जमपुरिहि पयाणउं ।।१६।।

१७

भरत की प्रशसा

आरणालं—जो वरचरमकुलयरो पढमणिववरो पंकयच्छियाए ।।
जिणवंसो पयासियो जेण भूसिओ रायलच्छियाए ।।१।।
जासु चक्कु रिउचक्कु णिसुभइ
जासु दंडु परदंडु णिरुंभइ ।
जासु पुरोहु पुराइउ पेच्छइ
तुरउ तुरिउ हियएं सहुं गच्छइ ।
कागणि दिणमणि ससि वि दुगुंछइ
थवइ थवइ तिहुयणु जइ इच्छइ :
छायइ छत्तु होतु विवरेरउ
असि असु कड्ढइ सत्तुहुं केरउ ।
चम्मु चमू धरतु अइभासइ
सेणावइ सेणावइ णासइ ।
मागहु वरतणु जेण पहासु वि
णिज्जिउ सुरु वेयड्ढणिवासु वि

तात (ऋषभ) के बाद भरत राजा है और तुम भुवन में एकमात्र प्रधान युवराज हो। अत चित्तभेद मान और अहकार छोडकर जीव को एकमेक मानकर, तरुणीजनों के कण्ठों को कण्टकित करने वाले, शत्रुरूपी गजों के दांतों को परिभ्रष्ट करने वाले, प्रदीर्घ धनुषो को आकर्षित करने वाले जिन बाहुओं से (जिन भरत का) आलिगन किया है उन्ही बाहुओ से उनके साथ युद्ध में नही लडा जाना चाहिए, गुरुजन में अविनय से लज्जित होना चाहिए।

घत्ता—जो राजा कुलस्वामी, महाबल, सुजन और गुणी व्यक्ति को नमस्कार नही करते उनके घर में दरिद्रता बढती है और उनका यमपुरी के लिए प्रस्थान होता है ॥१६॥

१७

भरत की प्रशसा —

जो परम नरमशरीरी कुलकर है, पहला राजा है, जिसने जिनके यश को प्रकाशित किया है, और कमलनयनी राजलक्ष्मी ने उसे भूषित किया है, जिसका चक्र शत्रुचक्र को नष्ट कर देता है, जिसका दण्ड शत्रुदण्डको रोक देता है, जिसका मन्त्री आगे की बात देख लेता है, जिसका तुरग हृदय के साथ दौडता है, जिसका कागणीमणि सूर्य और चन्द्रमा की भी अपेक्षा नहीं रखता, जिसका स्थपति चाहे तो त्रिभुवन की रचना कर सकता है। विरुद्ध होने पर वह छत्र छा लेता है, और शत्रुओं के तलवार से प्राण निकाल लेता है। चमू (सेना) को पलटते हुए उसका चर्म अत्यन्त शोभित होता है, जिसने मागध और वरतनुको जीत लिया है और विजयार्ध पर्वत निवासी देव को भी जीत लिया है।

जेण तिमीसकवाडु विहट्टिउ
सिंधुदेविअहिमाणु पलोट्टिउ ।
दिण्ण केर हिमवंतकुमारहु
पुणु आइउ वसहइरिसुतीरहु ।
तहिं अप्पणउं णाउं संणिहियउ
छाहिच्छलेण व ससिणा गहियउ ।
तं तहिं दीसइ ण उण कलंकउ
णिवणामंकिउ भमइ ससंकउ ।
विसहरउलइ सविसहरवरिसइ
जित्तइं मेच्छउलइं सामरिसइ ।
णं पालेयसेलकिरीडहु
पुणु भउ जणियउं गंगाकूडहु ।
घत्ता—ढुक्की मंदाइणि कलसकर लोए दीसइ केही ।।
थिय णहाणकरणमणणिवणियडि मज्जण वालिणि जेहि।।१७।।

१८

वाहुवली का दो टूक उत्तर

आरणाल—जस्सायासगामिणो खयरसामिणो विहियहिययसल्ला ।
णमिविणमीसणामया णिरह णिम्मया जायया वसिल्ला ।।१।।
पुणु वेयड्ढहु कुलिसें ताडिउ
पुव्वकवाडु जेण उग्घाडिउ ।
णट्टमालि साहिउ मालायरु
पयजुइ पाडिउ णं पायडणरु ।
असमु वइरु किं तेण समाणउं
जं माणुसु रित्तउ उत्ताणउं ।
पिच्छकमंडलुमंडियहत्थहु
रोसु जणइ तं मुणिवरमत्थहु ।
चक्कवट्टि गुणमणिरयणायरु
आउ जाहु अवलोयहि भायरु ।

जिसने तिमिस्रा के किवाड़ों को विघटित कर दिया और सिन्धुदेवी का अभिमान चूर-चूर कर दिया। हिमवन्त कुमार को आज्ञा (अधीनता) देकर फिर वह कैलाश पर्वत के तट पर आया। वहाँ उसने अपना नाम लिखा, जिसे छाया के छल से चन्द्रमा ने ग्रहण कर लिया, वही नाम चन्द्रमा में दिखाई देता है वह कलंक नहीं है, राजा भरत के नाम से अंकित होकर चन्द्रमा रात-दिन भ्रमण करता है। मेघकुलों को बरसाने वाले नागकुलों और अमर्ष से भरे भरे हुए म्लेच्छकुलों को जिसने जीत लिया है, और मानो जिसने हिमशिखर के मुकुट वाले गंगाकूट को भी भय उत्पन्न कर दिया है।

घत्ता—कलश हाथ में लेकर गंगा नदी भी वहाँ पहुँची, लोगों को वह ऐसी दिखाई दी जैसे स्नान करने की इच्छा रखने वाले राजा के निकट स्नान कराने वाली दासी खड़ी हो॥१७॥

१८

बाहुबली का दो टूक उत्तर

आकाशगामी नमि-विनमि नाम के विद्याधर स्वामी हृदय में शल्य धारण कर, बिना किसी मद के जिसके वशीभूत हो गये, जिसने फिर विजयार्ध पर्वत को चक्र से आहत किया, जिसने पूर्व किवाड़ का उद्घाटन किया, जिसने कृतमाल को सिद्ध किया और मालाधर को एक प्राकृत जन की तरह अपने दोनों पैरों में गिरने के लिए बाध्य किया। उसके साथ अनंग (विग्रह) वैर क्या, जो ऊर्ध्वमुख मनुष्य को दीन करता है वह पिच्छी और कमण्डलु से मण्डित हाथ वाले मुनिवर-समूह को भी क्रोध उत्पन्न कर देता है। वह गुणरूपी मणियों का समुद्र चक्रवर्ती है। आओ भाई को नमस्कार देखें।

मा पज्जलउ तासु कोवाणलु
मा णिड्डहउ तुहारउ भुयवलु।
हा मा दुरयरएहिं विहिज्जउ
पोयणपुरपायारु दलिज्जउ।
मा उच्छलउ छइयदिसमेरउ
हरिखुरखयखोणीधूलीरउ।
मा धावंत महंत महारह
मा पिसुणह पूरंतु मणोरह।
काउ कंदलावलिहि म विरसउ
पलयकालु सोणिउं मा करिमउ
देहि कप्पु णिद्दप्पु हवेप्पिणु।
पेक्खु भरहु भावें पणवेप्पिणु।
तं णिसुणेप्पिणु वाहुवलीसें
पडिजंपिउं भूभंगविहीसें।

घत्ता—कंदप्पु अदप्पु ण होमि हउ दूययकरउ णिवारिउ॥
संकप्पें सो महु केरएण पहु उज्झिहइ णिरारिउ॥१८॥

१९

वाहुवली का उत्तर

आरणाल—जं दिण्ण महेसिणा दुरियणासिणा णयरदेसमेत्त।
तं महु लिहियसासण कुलविहूसणं हरइ को पहुत्त॥१॥

केसरिकेसरु वरसइथणयलु
सुहडहु सरणु मज्झु धरणीयलु।
जो हत्येण छिवइ सो केहउ
कि कयंतु कालाणलु जेहउ।
हउ सो पणवमि को मो भणइ

उसके क्रोध की आग न भड़के और तुम्हारा बाहुबल न जले, हाँ तुम हाथी के दाँत से विभक्त न हो, पोदनपुर के परकोटे नष्ट न हों, दिशा की मर्यादाओं को आच्छादित करने वाला, घोड़ों के खुरों से क्षत धरती का धूल-समूह न उछले, महान् महारथ न दौड़े, दुष्टों के मनोरथ पूरे न हों। मनुष्यों के ऊपर कौआ न बोले। प्रलयकाल पवन को न खींचे? इसलिये दर्पहीन होकर टैक्स दो, और भावपूर्वक प्रणाम कर भरत से मिलो। यह सुनकर भौंहों के संकोच से भयंकर बाहुबली ने प्रत्युत्तर दिया।

घत्ता—मैं कन्दर्प (कामदेव) हूँ, अदर्प (दर्पहीन) नहीं हो सकता। मैंने दूत समझकर मना किया। मेरे संकल्प से वह राजा निश्चित रूप से होगा ॥१८॥

१९

पापों का नाश करने वाले महर्षि ऋषभ ने जो सीमित नगर दे दिये हैं वह मेरा कुल विभूषित निश्चित शासन है, उस प्रभुत्व का कौन अपहरण करता है? सिंह की अयाल, उत्तम सती के स्तन तल, सुभट की शरण और मेरे धरती तल को जो अपने हाथ से छूता है, मैं उसके लिए यम और शनैश्चर के समान हूँ? मैं उसे प्रणाम करूँ, वह कौन है?

महिखंडेण कवण परमुण्णइ ।
किं जम्मणि देवहिं अहिसिंचिउ
किं मंदरगिरिसिहरि समच्चिउ ।
चक्कु दंडु तं तासु जि सारउ
महु पुणु ण कुंभारहु केरउ ।
करिसूयररहवरडिंभयरहं
णर णिहणमि रणि जे वि महारह ।
तइ चुक्कइ जइ सुयरइ जिणवरु ।
घत्ता–तहु मेइणि महु पोयणणयरु आइजिणिंद दिण्णउ ॥
अब्भिडउ पडउ असि सिहिसिहहिं जइ ण सरइ पडिवण्णउं ॥१९॥

२०

दूत का आक्रोश

आरणालं–ता दूएण जंपियं किं सुविप्पिय भणसि भो कुमारा ।
बाणा भरहपेसिया पिच्छभूसिया होंति दुण्णिवारा ॥१॥

पत्थरेण किं मेरु दलिज्जइ
किं खरेण मायंगु खलिज्जइ ।
खज्जोएं रवि णित्तेइज्जइ
किं घट्टेण जलहि सोसिज्जइ ।
गोप्पएण किं णहु माणिज्जइ
अण्णाणें किं जिणु जाणिज्जइ ।
वायसेण किं गरुडु णिरुज्झइ
णवकमलेण कुलिसु किं विज्झइ ।
करिणा किं मयारि मारिज्जइ
किं वसहेण वग्घु दारिज्जइ
किं हंसें ससंकु धवलिज्जइ

धरती खण्ड से कौन-सी परम उन्नति कही जाती है। क्या जन्म के समय, देवों ने उसका अभिषेक किया? क्या सुमेरु पर्वत पर उसकी पूजा की गयी? क्या उसके सामने सुरपति नाचा। वह स्वेच्छाचारिणी लक्ष्मी से इतना रोमांचित क्यों है? वह चक्रदण्ड उसी के लिए श्रेष्ठ हो सकता है, मेरे लिए तो वह कुम्हार का चक्का है। हाथी रूपी सुअरों और रथरूपी छकड़ों के जो भी महारथी मनुष्य हैं, उनको मैं मारूँगा? भरत मेरे भुजाभार का क्या अपहरण करेगा? वह तभी बच सकता है कि जब जिनवर की याद करता है?

घत्ता—उसकी धरती और मेरा पोदनपुर नगर, दोनों आदि-जिनेन्द्र ने दिये। यदि वह स्वीकार किये हुए को नहीं मानता, तो वह तलवार से लड़ता हुआ अग्नि की ज्वाला में पड़ेगा? ॥१९॥

२०

दूत का आक्रोश

तब दूत ने कहा, "हे कुमार, यह अप्रिय क्या कहते हो? भरत के द्वारा प्रेषित पंख विभूषित तीर दुर्निवार होंगे? पत्थर से क्या सुमेरु पर्वत ढला जा सकता है? क्या गधे से हाथी स्खलित किया जा सकता है? जुगनू के द्वारा क्या सूर्य निस्तेज किया जा सकता है? क्या घूंघट से समुद्र सोखा जा सकता है, गोपद से क्या आकाश मापा जा सकता है? अज्ञान से क्या जिनको जाना जा सकता है, तीर के द्वारा क्या गरुड़ रोका जा सकता है? नपानल से क्या वज्र को बेधा जा सकता है? हाथी के द्वारा क्या सिंह मारा जा सकता है? क्या बैल के द्वारा बाघ विदीर्ण किया जा सकता है? क्या तम के द्वारा चन्द्रमा धवल किया जा सकता है?

किं मणुएण कालु कवलिज्जइ ।
डेडुहेण किं सप्पु डसिज्जइ
किं कम्मेण सिद्धु वसि किज्जइ ।
किं णीसासें लोउ णिहिप्पइ
किं पइ भरहणराहिउ जिप्पइ ।

घत्ता–हो होउ पहुप्पइ जपिएण राउ तुहुप्परि वग्गइ ।।
करवालहिं सूलहिं मव्वलहिं परइ रणगणि लग्गइ ।।२०।।

२१

वाहुवली का कडा प्रतिवाद

आरणाल–ता भणियं सहेउणा मयरकेउणा एत्थ कहिं मि जाया ।
जे परदविणहारिणो कलहकारिणो ते जयम्मि राया ।।१।।

वुड्ढउ जवुउ सिव सद्दिज्जइ
एण णाइं महु हासउ दिज्जइ ।
जो वलवतु चोरु सो राणउ
णिव्वलु पुणु किज्जइ णिप्राणउ ।
हिप्पइ मृगहु मृगेण जि आमिसु
हिप्पइ मणुयहु मणुएण जि वसु ।
रवखाकयइजूहु रएप्पिणु
एक्कहु केरी आण लएप्पिणु ।
ते णिवसंति तिलोइगाविट्ठउ
सीहहु केरउ वंदु ण दिट्ठउ ।
माणभंगि वर मरणु ण जीविउ
एहउ दूय सुट्ठु मइं भाविउ ।
आवउ भाउ घाउ तहु दंसमि
मंझाराउ व रणि विद्धंसमि ।

क्या मनुष्य के द्वारा कवलित किया जा सकता है? मेंढक के द्वारा क्या साँप डसा जा सकता है, क्या कर्म के द्वारा सिद्ध को वश में किया जा सकता है? क्या विषधर से लोक को आहत किया जा सकता है? क्या तुम्हारे द्वारा भरत नराधिप जीता जा सकता है।

घत्ता—हो-हो, बकने से क्या समर्थ हुआ जा सकता है? राजा तुम्हारे ऊपर आक्रमण करता है, करवालों, शूलों और सब्बलों सहित सबेरे तुमसे वह रण के आँगन में मिलेगा ॥२०॥

२१

बाहुबली का प्रतिवाद

तब कामदेव बाहुबलि युक्ति के साथ कहता है—"चाहे यहाँ, या और कहीं विश्व में जो कलह करने वाले और दूसरों का धन अपहरण करने वाले हैं, वे ही राजा हुए हैं? बूढ़ा सियार कल्याण की बात करता है, जैसे यह मुझे हँसी प्रदान करता है, जो बलवान चोर है, वह राजा है, और जो निर्बल है वह निष्प्राण कर दिया जाता है। पशु के द्वारा पशु का मांस अपहृत किया जाता है और मनुष्य के द्वारा मनुष्य के धन का अपहरण किया जाता है। रक्षा की आकांक्षा से व्यूह रचकर, एक की आज्ञा लेकर वे लोग निवास करते हैं। लेकिन यह बात त्रिलोक में सर्वविदित है कि सिंह का कोई समूह दिखाई नहीं देता। मानभंग होने पर मर जाना अच्छा है, जीना नहीं।" हे दूत, यह बात मुझे बहुत अच्छी लगती है। भाई आये, मैं उसे आघात दिखाऊँगा और गरुड़ नाग की तरह एक क्षण में उसे नष्ट कर दूंगा?

ढोयइ रयणइ णउ करिरयणइ
ढोएसइ ध्रुवु णरउररयणइ ।

घत्ता—सताणु कुलक्कमु गुरुकहिउ खत्तधम्मु णउ वुज्झइ ॥
मज्जायविवज्जिउ सामरिसु अवसें दाइउ जुज्झइ ॥२२॥

२३

सूर्यास्त का वर्णन

आरणाल—ता परिल्हसिउ दिणमणी ण सिरोमणी गयणकामिणीए ।
अत्थं पडि णिवेइओ रुइविराइओ णाइ जामिणीए ॥१॥

मावेसहि भणेवि अइरत्तउ
दिवसहु दिण्णु दीवु सिहितत्तउ ।
णं चउपहरहिं वणु अहिकंतिहि
जायउ लोहियद्दु णहदंतिहि ।
णाइं पवालकुंभु दिसणारिइ
घरिवि मुक्कु दिक्करिगणियारिइ ।
पउलिवि तलिवि दलिवि दलवहिवि
जीवरासि जगभायणि घट्टिवि ।
दंडरहियजणलोहियलित्ती
कालेंडा विव दिसिवहि घित्ती ।
उग्घाडिवि ससहरणुह णिद्धहि
संमुहियहि तियसासामुद्धहि ।
ण सिंदूरकररंडु झमच्छिइ
दाविउ लवणजलहिजललच्छिइ ।
मयरंदुल्लोलु व जगकमलहु
णिउ वाएण वरुणमुहकमलहु ।

वह रत्नो और गजरत्नो को उपहार मे नही देता वह मनुष्य-वक्षो के रत्नो को लेगा।

घत्ता—वह परम्परा कुलक्रम गुरु द्‍वारा कथित क्षात्र धर्म नही समझता, मर्यादा विहीन सामर्प वह शत्रु अवश्य युद्ध करेगा ।।२२।।

२३

इतने मे सूर्य स्खलित हो गया, मानो आकाश की कामिनी के द्‍वारा शिरोमणि अस्ताचल के प्रति निवेदित किया गया हो, मानो यामिनीरूपी (नायिका) ने कान्ति से शोभित अत्यन्त लाल आग से संतप्त दीप, दिवस के लिए दिया हो यह सोचकर कि तुम (दिन) प्रवेश मत करो।" मानो चार प्रहर तक अभिक्रान्त होते हुए आकाश रूपी गज का रक्त-रजित घाव हो, मानो दिशारूपी नारी ने प्रवाल का घडा धारण कर दिशारूपी गज की हथिनी पर छोड दिया हो, मानो काल के द्वारा विश्वरूपी भाजन में घोटकर, तलकर, दलकर, चूर-चूर कर दडरहित जनरक्त से लाल जीवराशि अण्डे के समान दिशापथ मे फेंक दी गई हो। मानो मत्स्य नयनी, लवण समुद्र की जल-लक्ष्मी ने स्निग्ध सामने आई हुई, उत्तर दिशा रूपी मुग्धा का चन्द्रमुख खोलकर सिंदूर का पात्र दिया हो, मानो विश्वरूपी कमल के मकरद के समूह वायु के द्‍वारा वरुण के मुखकमल के लिए ले जाया गया है।

गोमिणीइ हरिरइरसभरिउ
पोमरायवत्तु व वीसरिउं।
अत्थमियउ जाइवि अवरासइ
रत्तु मित्तु णं गिलियउ वेसइ।

घत्ता—पुणु दीसइ सञ्झारायएण भुवणु असेसु वि रत्तउ॥
सहुं गिरिदरिणंदणवणहिं लक्खारसि णं घित्तउ॥२३॥

१८

सध्याराग और चाँदनी का वर्णन

आरणाल—आसोसियखमारसो खवियतावसो तरुणिदंसणाओ।
णं णरमणि ण माइओ दिसहिं धाइओ सहइ मयणराओ॥१॥

संझारायजलणु जो भमियउ
सो तमजलकल्लोलहिं समियउ।
संझारायघुसिणु जं संकिउ
तं तमोहमयणाहें ढंकिउ।
संझारायविडवि जो फुल्लिउ
सो तमतवेरमवइपेल्लिउ
चंदमइंदे तमकरि भग्गउ
किं जाणहुं सो तासु जि लग्गउ।
मयणिहेण दीसइ सुहयारउ
तप्पवेसु वइरिहिं भल्लारउ।
चिमइ गवक्खहिं थणयलि घोलइ
वहुहारु व ससितेउ णिहालइ।
रधायारु थियउ अंधारउ
दुद्धसंक पयणइ मज्जारइ।

मानो गोपी ने हरि के रतिरस से भरित पद्मराग मणि-पात्र भुला दिया हो, दूसरी दिशा मे जाकर सूर्य अस्त हो गया मानो रक्त मित्र (सूर्य, मित्र) को वेश्या हड़प गई हो।

घत्ता—पुन अशेष भुवन सन्ध्याराग से आरक्त दिखाई देता है, मानो पहाडो, घाटियो, नदियो और नन्दनवनो के साथ वह लाक्षा रस मे डुबा दिया गया हो ॥२३॥

२४

क्षमारूपी रस को सोख लेने वाला, तापसो का नाशक, युवतियो को पीड़ित करने वाला मदनराज चूंकि मनुष्य मन मे नही समाता हुआ, मानो दिशाओ मे दौड रहा है। सन्ध्या राग रूपी जो आग घूम रही थी, उसे अन्धकार रूपी जलतरगो के द्वारा शान्त कर दिया गया, जिस सन्ध्या राग रूपी केशर की आशका की गयी थी, उसे तम-समूहरूपी सिह ने ढक दिया। सध्यारागरूपी जो वृक्ष खिला हुआ था उसे अन्धकार रूपी गजराज ने उखाड डाला, चन्द्रमा रूपी मृगेन्द्र ने अन्धकार रूपी गज को भगा दिया। क्या जाने वह उसी को लग गया जो मृग लाँछन के रूप में शुभ करने वाला दिखाई देता है। तल्पवेश में जो शत्रुओ को अच्छा लगता है। गवाक्षो से प्रवेश करता है, स्तनतल पर गिरता है, शशि का तेज अनेक हारो के समान दिखाई देता है, अन्धेरे में रन्ध्राकार दिखाई देता है, और मार्जारो के लिए दूध की आशका उत्पन्न करता है,

रइपासेयबिंदु तेणुज्जलु
दिट्ठु भुयंगहि णं मुत्ताहलु ।
दिट्ठउ कत्थइ दीहायारउ
घरि पइसंतउ किरणुक्केरउ ।
मोरें पडउ सप्पु वियप्पिवि
मुद्धें कह व ण गहिउ झडप्पिवि ।

घत्ता–गंगासरि हंसपक्खदलइ पियविरहिणिगंडयलइ ।।
जायइं ससियरपक्खालियइ धवलाइं जि णिरु धवलइ ।।२४।।

२५

रतिक्रीडा

आरणाल–मम्मणभणियजंपिरं मयणकंपिरं पणयविणयवंतं ।
रइरसरहसरंजियं पिययमा पियं रमइ णिसि रमंतं ।।१।।
केण वि घणथणि णिहियउ करयलु
कणयकलसि णावइ रत्तुप्पलु ।
काइ वि को वि सुहउ आलिंगिउ
मड्डमड्डमुहचुंवणु मग्गिउ ।
णीहरंति पडिवहुरोसुब्भवि
केण वि का वि धरिया करपल्लवि ।
पणयकलहि रमणीचरणंगउ
को वि सकुंकुमेण पाए हउ ।
सोहइ विट्टु अइरा रिउ संकिउ
ण मयरद्धयमुद्दइ अंकिउ ।
हारें बद्ध का वि सयणालइ
ताडिय णाहें चंपयमालइ ।
बिंबाहररसघयसित्तउ
काहं वि मयणहुयासु पलित्तउ ।

उससे (चन्द्रमा) रति का प्रस्वेद कण जल उज्ज्वल दिखाई देता है, जो मानो सर्पिणी के मोती के समान जान पडता है। कही पर घर मे दीर्घ आकार मे प्रवेश करता हुआ किरण-समूह दीख पडता है, मयूर ने उसे सफेद साँप समझकर किसी प्रकार झपटकर खाया भर नही।

घत्ता——गगा नदी, हसो के पक्ष दल और प्रिय से विराहिताओ के गण्डतल एक तो धवल थे ही, परन्तु चन्द्रमा की किरणो से प्रक्षालित होकर वे और भी धवल हो उठे ।।२४।।

२५

अपने मन मे कामदेव का जाप करते हुए काम से कांपते हुए प्रणय से विनीत रति रस और हर्ष से रजित, रमणशील प्रिय से प्रियतमा रात मे रमण करती हे। किसी ने सघन स्तन पर अपना करतल रख दिया, मानो स्वर्ण कलश पर लाल कमल हो। किसी के द्वारा कोई सुभग (प्रिय) आलिगित किया गया, और बलपूर्वक मुख चुम्बन माँगा गया। प्रतिवधू (सपत्नी) के कारण क्रोध उत्पन्न होने के कारण बाहर जाती हुई किसी को किसी ने कर पल्लव मे पकड लिया। प्रणय कलह मे रमणी चरण में पडा हुआ कोई केशर सहित पैर से आहत किया गया। थोडी देर के लिए शत्रु के रूप में शकित किया गया कोई विट शोभित है, मानो वह कामदेव की मुद्रा से अकित हो। शयन तल मे हार से बँधी हुई कोई प्रिया, स्वामी द्वारा चम्पक माला से ताडित की गयी। बिम्बाधरो के रस रूपी घी से सीची गयी किन्ही की कामाग्नि भडक उठी,

उल्हाविउ रइसलिलपवाहँ
काइ वि किलिकिंचिउ उच्छाहँ ।
का वि रयावसाणससरीणी
चंदणकद्दमवाविहि लीणी ।
को वि का वि सवयहँहि रंजइ गुणि
अवक्कमाण मज्झु परपणइणि ।
जाम एसु वेसाणरु अच्छइ
तावण्णहि को वयणु णियच्छइ ।
जणणि महेली मणि अवहारमि
गुरुपय छियमि ण पइ अवहेरमि ।

घत्ता–इय कवडकूडमउजंपियहिं दाणेण व वसिहूयउ ।।
णारीयणु रमिउ विडाहिवहिं वेढिवि णिरुवमरूवउ ।।२५।।

२६

सूर्योदय का चित्रण

आरणाल–दीहा वि रयमिहुणह चक्कवियणहं पहियवदयाणं ।
मउहा हवइ रयणिया चंदवयणिया रयविड्ढियाणं ।।१।।

ता उग्गमिउ सूरु पुव्वासइ
रइरगु व दरिसिउ कामासइ ।
किंसुयकुसुमपुंजु ण सोहिउ
णं जगभवणि पईवु पवोहिउ ।
चारु सूरु वंसहु ण फंदउ
लोहिउ समि रोसेण दिणिंदउ ।
मज्झु परोक्खइ आवइ पाविय
कमलिणि वेल्लि भणिवि संताविय ।

जिसे रति रूपी जल के प्रवाह से शान्त किया गया। किसी ने उत्साह से किलकिंचित् किया। कोई रति के अवसान में श्रम से खिन्न चन्दन की कीचड की वावडी मे लीन हो गयी। कोई गुणी किसी को शपथो मे समझाता है कि दूसरे की प्रणयिनी मेरे लिए माता के समान है। जव तक यह वैश्वानर है, तव तक अन्य का मुख कौन देखता है। अन्य महिला को मै मन मे माता के रूप में धारण करता हूँ, गुरु के चरणो को छूता हूँ कि तुम्हारी उपेक्षा नही करूँगा।"

घत्ता—इस प्रकार विटराजो द्वारा कपट और कूट और कोमल उक्तियो तथा दान से वशीभूत कर अनुपम रूप वाला नारीजन का आलिंगन कर रमण किया गया ॥२५॥

२६

सूर्योदय का वर्णन

रमण करते हुए जोडो, चकवाक पक्षियो और पथिक समूहो और रत विटराजो के चन्द्रमुखी लम्बी भी रात छोटी लगी। तव पूर्व दिशा मे सूरज उग आया, जो काम की आशा मे रतिरंग (कामदेव) के समान दिखाई दिया, मानो पलाश पुष्पो का समूह शोभित हो, मानो विश्वरूपी भवन मे प्रदीप प्रबोधित कर दिया गया हो, सुन्दर सूर्य मानो वंश का अंकुर हो। मानो दिनेश चन्द्रमा के क्रोध से लाल हो उठा हो कि यह पापी (चन्द्रमा) मेरे परोक्ष में आता है और कमलिनी को लता कहकर (समझ कर) सताता है।

एम भणतु व गयणि व लग्गउ
णं रयणियरहु पच्छइ लग्गउ ।
तंबु करोहउ रुहिरु णिसाडें
चिंतिउ एंतु सछिद्दकवाडे ।
कुंकुमलोलु व मण्णिउ घरिणिइ
रत्तु दुवंकुरु कदरहरिणिइ ।
मिलियउ सोहइ विद्दुममहियलि
मिलियउ सोहइ कंकेल्लीदलि ।
मिलियउ सोहइ रत्तइ सयदलि
मिलियउ सोहइ रमणीकरयलि ।
मिलियउ सोहइ जण अहरुल्लइ
महिहरतीर धाउ जलरेल्लइ ।
राउ मुयतु जि गुणसंजुत्तउ
अरहतु व रवि उण्णइं पत्तउ ।
घत्ता–हयतिमिरें भरहपयासएण रविणा किं ण वि दाविउ ।।
सिरिरामासेवियसच्छसरपुप्फयंतु वियसाविउ ।।२६।।

इय महापुराणे तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकारे महाकइपुप्फयतविरइए
महाभव्वभरहाणुमण्णिए महाकव्वे वाहुवलिदूयसंपेसणं
णाम सोलहमो परिच्छेओ सम्मत्तो ।। १६ ।।

।। संधि ।। १६ ।।

ऐसा कहकर जैसे वह आकाश से लग जाता है मानो निशाचरो के पीछे लग गया हो। निशाचर ने लाल किरण-समूह को रुधिर समझा, लेकिन गृहिणी ने छेद वाले किवाडो से आते हुए उसे (किरण-समूह) केशर पराग माना, गुफा में रहने वाली हरिणी ने लाल दुर्वांकुर समझा। लाल कमल में मिला हुआ वह शोभित है, अशोक के पत्तो मे मिला हुआ शोभित है। जनो के अधरो मे मिला हुआ शोभित है, वह राग (लाल रग) महीधरो के तट और जल की लहरियो मे दौडा। इस प्रकार 'राग' (रागभाव और लालिमा) छोडते हुए और गुणो से सयुक्त अरहन्त के समान सूर्य भी उन्नति को प्राप्त हुआ।

घत्ता--भरत के प्रसाद से अन्धकार को नष्ट करने वाले सूर्य ने क्या नही दिखाया। लक्ष्मीरूपी रमा से सेवित स्वच्छ सरोवर और पुष्पो को विकसित कर दिया ॥२६॥

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषो के गुणो और अलकारो वाले इस महापुराण में महाकवि पुष्पदन्त द्वारा विरचित और महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्य का बाहुबलि दूत सप्रेषण वाला सोलहवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ ॥१६॥

सन्धि १७

सेना की तैयारी

दूयागमि रविउग्गमि चलकरवाललला वियजोहहो ।।
जाइवि णंदाणंदणहो भिडिउ भरहु रणि सीहु व सीहहो ।।ध्रुवकं।।

१

ता समरचित्तु विसरिसु विरुद्धु
विप्फरियदसणडसियाहरुद्धु ।
कढिणयरपाणिपीडियकिवाणु
उद्धुयमीसियहयभउहकोणु ।
तिवलीतरंगभंगुरियभालु
ण सीहु कुडिलदाढाकरालु ।
अरुणच्छिच्छोहरंजियदियंतु
ण पलयजलणु धगधगधगंतु ।
दूययवयणहि वड्ढियकसाउ
जपइ सरोसु रायाहिराउ ।
मुयरेप्पिणु तायहु तणउ चारु
जइ कह व ण मारमि रणि कुमारु ।
तो धरिवि णिरुंभवि करमि तेम
अच्छइ करि जिह णियतात्थु जेम ।
महु कुद्धहु रणि देव वि अदेव
सो ण करइ किं महु तणिय सेव ।

सन्धि १७

सेना की तैयारी

दूत के आगमन और सूर्य का उदय होने पर, जिसकी चचल तलवाररूपी जीभ लपलपा रही है ऐसे नन्दानन्दन (वाहुवली) से भरत रण मे उसी प्रकार भिड गया, जिस प्रकार सिंह से सिह भिड जाता है।

१

तव युद्ध के लिए कृतमन, असमान विरुद्ध, विस्फारित दांतो से आधा ओठ चवाता हुआ, अपने कठोरतर हाथ से कृपाण को पीटता हुआ, उद्धत मिली हुई आहत भौंहो के कोणवाला, त्रिवलि तरग मे भंगुरित भालवाला वह ऐसा प्रतीत हो रहा था मानो कुटिल दाढो मे कराल (भयकर) तथा अपनी लाल-लाल आँखो की आभा मे दिगन्त को रजित करने वाला सिंह हो। मानो धकधक करती हुई प्रलय की ज्वाला हो। दूत के शब्दो से जिसका क्रोध बढ गया है ऐसा वह राजाधिराज क्रोध मे कहता है—"पिता के सुन्दर वचनो की याद कर, यदि मै किसी प्रकार कुमार को रण मे मारता नही हूँ, तो उसे पकड कर और अवरुद्ध कर उसी प्रकार कर दूंगा जिस प्रकार वेडियो मे जकडा हुआ हाथी रहता है। मेरे क्रुद्ध होने पर देव और अदेव मेरी सेवा करते है, फिर वह मेरी सेवा क्यो नही करता?" इस प्रकार

इय गज्जवि असितासियसुरिंदु
जा उट्ठिउ भरहु महाणरिंदु ।
ता मउडबद्ध मंडलिय चलय
केऊरसकठाहरणधुलिय ।
महिवडियकणयकचीकलाव
अइभीसण थिय णं कालभाव ।
एक्केक्क पहाण गिरिंदधीर
सहुं राएं लहु संणद्ध वीर ।

घत्ता—संणज्झंतहु लहु भडयणहु का वि णारि पभणइ जइ जाणहि ।।
किं पि महारउ उवयरिउ तो पिययम सुररमणि म माणहि ।।१।।

२

सैनिक की स्त्रियो की प्रतिक्रियाएँ —

वहु का वि भणइ हत्थागएण
किं कीरइ मणिकंकणसएण ।
अरिकरिदंतुब्भउ एक्कु जइ वि
दलडल्लउ सोहइ हत्थि तइ वि ।
तं धवलउ तुह पोरिसजसेण
आणेज्जसु पिय महु रइवसेण ।
वहु का वि भणइ एहु वि सुतारु
किं तुज्झ पसाएं णत्थि हारु ।
तुह करणिसियसुक्कत्तिएहिं
परकुंभिकुंभचुयमोत्तिएहिं ।
हउ कित्तिलया इव कुसुमियंगि
इच्छमि दाविज्जसु एह भंगि ।
वहु का वि भणइ महिमाहरेण
मइं विज्जहि किं चीरें करेण ।

गरज कर अपनी तलवार से देवेन्द्र को त्रस्त करने वाला महान् नरेन्द्र भरत उठा । तब मुकुटबद्ध तथा केयूरो और कण्ठाभरणो से आन्दोलित माण्डलीक राजा चले । जिनके स्वर्ण के करधनी-समूह धरती पर गिर रहे है, ऐसे अत्यन्त भीषण वे इस प्रकार स्थित हो गये जैसे कालस्वरूप ही हो । एक से एक प्रमुख गिरीन्द्र की तरह धीर वे वीर शीघ्र राजा के साथ तैयार हो गये ।

घत्ता—तैयार होते हुए उस एक योद्धाजन से कोई वधू कहती है, "यदि तुम मेरा कोई उपकार मानते हो तो हे प्रियतम, सुर रमणी को मत पसन्द करना" ॥१॥

७

सैनिक स्त्रियो की प्रतिक्रियाएँ

कोई वधू कहती है—"हाथ मे आये हुए सैकडो मणिकंकणो से क्या, हाथीदांत का बना एक कडा यदि हाथ मे मोहता है, उस धवल कडे को हे प्रिय तुम अपने पौरुष और यश तथा मेरे प्रेम के वश से ले आना ।" कोई वधू कहती है—"यह स्वच्छ हार क्या तुम्हारे प्रसाद से मेरे पास नही है ? तुम्हारे हाथ की तलवार के द्वारा उखाडे गये और शत्रु गजो के कुम्भ स्थलो मे गिरे हुए मोतियो से कुसुमित अगोवाली मैं कीर्ति लता की तरह शोभित होऊँ, तुम मुझे यह भंगिमा दिखाओ ।" कोई वधू कहती है—"महिमा का हरण करने वाले चीर या हाथ से मुझे हवा क्यो करते हो ?

अवरइ वि पहयाइं परियलियसखाइ
जयविजयसिरिकामिणीसोक्खकंखाइं ।
रुजतरंजाइं भेभंतभेंभाइ
हल्लावियाहिदमहिसायरब्भाइं ।
चलियाइ सेण्णाहं संणाहसोहाइ
वरकुंजराखढरणरूढजोहाइं ।
णरकरविमुक्कासखुरखयधरग्गाइ
चलधूलिकविलाइं विप्फुरियखग्गाइ ।
परिमिलियमंडलियवलसारवताइं
धावंतपाइक्ककरधरियकोंताइं ।
रहचक्कचिक्कारभेसियभुयंगाइ
णिवछत्तछाहीहिं छाइयपयंगाइं ।
जक्खिदखर्वारदभूमिदभीमाइ
खयकालकीलाहि कीलाविरामाइ ।

घत्ता–इय भरहाहिउ णीसरिउ जाम समउ मतिहि सामतहि ।।
ता वेयालियचरणहिं विण्णवियउ वाहुवलि णवंतहि ।। 3 ।।

८

सैन्य समुद्र का रूपक

परियणजलेण णहु महि पिहंतु
उत्तुंगतुरंगतरंगवंतु ।
करिमयरपसारियचडसोडु
सियपुंडरीयडिडीरपिंडु ।
लायण्णपउरगंभीरघोसु
दुग्गउं चोद्दहरयणाहिवासु ।
संदणवोहित्थसमूहचवलु
पंचंगमत 4पायालविलु ।

और भी, जय-विजय श्रीकामिनी और सुख की आकांक्षा रखने वाले और भी असख्य शख बजा दिये गये। शब्द करते हुए रुज-शख, भे-भे करते हुए भे-भा शख बज उठे। नाग, मही, समुद्र और मेघो को हिलाती हुई कवचो मे शोभित सेनाए चली। योद्धाओ के द्वारा मुक्त अश्व खुरो से धरती का अग्रभाग आहत हो उठा। चचल धूलि से कपिल रग की तलवारे चमक रही थी। बल मे श्रेष्ठ योद्धा मिले हुए और मण्डलाकार थे। हाथ मे भाल लिये हुए पैदल सिपाही दौड रहे थे। रथो के चको की चिक्कारो से भुजग भयभीत हो उठ। नृप छत्रो की छाया से सूर्य आच्छादित हो गया। जो यक्षेन्द्रो, विद्याधरेन्द्रो और मानवेन्द्रो से भयकर और क्षयकाल की क्रीडा से विराम देने वाली थी।

घत्ता—इस प्रकार जब भरताधिप मन्त्रियो और सामन्तो के साथ निकला, तब वैतालिको और चारणो ने प्रणाम कर बाहुबलि से निवेदन किया ॥३॥

८

सैन्य समुद्र का रूपक

"हे देव, तुम्हारे ऊपर सैन्यरूपी समुद्र उछल पडा है, जो परिजन रूपी जल से धरती और आकाश को ढकता हुआ, उत्तुग तुरगरूपी तरगो से युक्त, हाथी रूपी मगरो से अपनी प्रचण्ड सूंड उठाये हुए, श्वेत छत्रो के फेन समूह से युक्त लावण्य (सौन्दर्य और खारापन) के प्रचुर गम्भीर घोष वाला, दुर्गम चौदह रत्नो से अधिष्ठित, रथो के

जसमोत्तियमंडियतिजगतीरु
आणंदियणियकुल 5 कुद्दहोरु ।
धयवडजलयरपरि 6घुलणरंगु
दूरयरणिहित्तमलोहसंगु ।
तुज्झु वरि देव असिझसरउद्दु
उत्थल्लिउ णरवइ वलसमुद्दु ।
सुविचित्तपत्तपत्तियसरेण
ता वुच्चइ वाहुवलीसरेण ।
हउं एक्कु वइरि किं पउर भणहि
किं कालहु अग्गइ जीव गणहि ।
किं डज्झइ हुय हुयवहु तरुवरेहि
किं खज्जइ खगवइ विसहरेहिं ।
किं कुसुमवाण जिणमणु हरंति
गोमाउ मइंदहु किं करंति ।
छाइज्जइ क भयणेहिं भाणु
पउर वि रिउ महु ण पलंति माणु ।

घत्ता—एक्कु वि पउ ण समोसरमि णायायारहिं पंथु णिरुभमि ।।
आवंतहु णिवसायरहो सरवरपंतिहिं वरणु णिवंधमि ।।४।।

५

वाहुवलि की तैयारी

गज्जंतु एम पलयक्कतेउ
संणज्झइ सिरिवाहुवलिदेउ ।
जोयतहु णियभुयथामसंचु
कामु वि वड्ढिल रोमचु उंचु ।
हियवइ संणाहु ण माइ केम
वहुलोहवंतु काउरिसु जेम ।

वोहित्थ-समूह से चपल, पचाग मन्त्र रूपी पाताल से विपुल, यशरूपी मोतियों से त्रिजगरूपी तीर को मण्डित करने वाला, अपने कुलरूपी चन्द्र को आनन्दित करता हुआ, ध्वज पटो के जलचरो से व्याप्त शरीर, अन्याय रूपी मल समूह को दूर करने वाला तथा तलवार रूपी मत्स्यो से भयकर है।" तव सुविचित्र पुखो से विभूपित तीरो वाले वाहुवलीश्वर ने कहा—"ऐसा क्यो कहते हो कि मैं अकेला हूँ और शत्रु वहुत है ? क्या तुम काल के आगे जीव की गिनती करते हो, क्या आग तरुवरो के द्वारा जलायी जा सकती है ? क्या नागो के द्वारा गरुड खाया जा सकता है ? क्या काम के वाण जिनमन का हरण कर सकते है ? सियार सिंह का क्या कर सकते है ? क्या नक्षत्रों के द्वारा सूर्य आच्छादित किया जा सकता है ? प्रवर शत्रु भी मेरा मान मलिन नही कर सकता।

घत्ता—मैं एक भी पैर नही हटूँगा, और नाग के आकार के तीरो से मार्ग को अवरुद्ध कर लूँगा। आते हुए राजा रूपी समुद्र के लिए मैं सरवरो की कतारो से तट वाँध दूँगा।

५

वाहुवली की तैयारी

प्रलय सूर्य के समान तेजस्वी श्री वाहुवलीश्वर देव गरजते हुए तैयार होते है। अपने वाहुवल की स्थिरता और वनावट देखकर किसी योद्धा का रोमाँच हो गया, उसके हृदय में लोहवंत (लोहे से निर्मित और लोभयुक्त) कवच उसी प्रकार नही समा सका जिस प्रकार

केण वि वद्धी जयकामएण
असिधेणुय रसणादामएण।
केण वि इच्छिय संगामदिक्ख
सरमोक्खहु केरी परमसिक्ख।
केण वि गुणु वलइउ कहिं वि चावि
चप्पिवि णं खलयणि कुडिलभावि।
केण वि णिवद्धु तोणीरजुयलु
ण गरुडें दाविउ पक्खजमलु।
केण वि कड्ढिउ करवालु चंडु
णं मेहें दरिसिउ विज्जुदंडु।
भडु को वि भणइ परु हणमि अज्जु
णिक्कटउ सामिहि देमि रज्जु।
पहु तुच्छु पउर रिउ हउं वि धीरु
भणु सुंदरि किं कीरइ वियारु।
अवरुंडहि लहु दे देहि हत्थु
को जाणइ पुणु सजीउ केत्थु।
अयड्ढिउ पहुहि पसाउ जेहिं
रणि जुज्झमि अज्जु भुएहिं तेहिं।

घत्ता—भासइ को वि महासुहडु मुइ कंति ण एवहिं मज्झमि।।
णिग्गवि रायहु तणउ रिणु अज्जु सीसदाणेण विसुज्झमि।।५।।

६

सैनिकों की गर्वोक्तियां

भडु को वि भणइ कयवणमुहेहिं
जइ भिज्जइ उरु करिमुहरुहेहिं।
जइ खज्जइ आमिसु रक्खसेहिं
जइ पिज्जइ सोणिउं वायसेहिं।

कापुरुष। जय के अभिलाषी किसी ने छुरी अपनी करधनी के सूत्र से बाँध ली। किसी ने संग्राम दीक्षा की इच्छा की और किसी ने तीर चलाने की परम शिक्षा की। किसी ने धनुष की डोरी को वहीं चांपा, मानो कुटिल भाव वाले खल जन को चांपा हो। किसी योद्धा ने तरकस युगल इस प्रकार बाँध लिया मानो गरुड़ ने अपने पक्ष युगल को दिखाया हो? किसी ने अपनी प्रचण्ड तलवार निकाल ली मानो मेघ ने विद्युद् दण्ड का प्रदर्शन किया हो। कोई योद्धा कहता है आज मैं शत्रु को मारूँगा और स्वामी को निष्कण्टक राज्य दूँगा। स्वामी तुच्छ है और शत्रु प्रवर है, तो मैं भी वीर हूँ, हे सुन्दरी, क्या विचार करना? जल्दी अपना हाथ दो और आलिंगन करो, कौन जानता है फिर सयोग कहाँ हो? मैंने अपने जिन हाथो से प्रभु का प्रसाद लिया है आज मैं उन्ही हाथो से युद्ध करूँगा?

घत्ता—कोई महासुभट कहता है कि हे कान्ते छोडो-छोडो मैं कुछ भी सुन्दर नही करूँगा। बाहर निकलकर मैं अपने सिर के दान से राजा के ऋण का शोधन करूँगा ॥५॥

६

सैनिको की प्रतिक्रिया

कोई सुभट कहता है कि जिनके मुख में घाव कर दिये गये है, ऐसे गजसूँडो से यदि मेरे उरतल का भेदन कर दिया जाता है, यदि राक्षसो द्वारा मेरा आमिष खा लिया जाता है, यदि कौओ के द्वारा मेरा रक्त पी लिया जाता है,

जइ अंतइं गिद्धइं लइवि जंति
तो मरणमणोरह महु सरंति।
भडु को वि भणइ हलि हत्थु देमि
गयदंतमुसलु कड्ढेवि लेमि।
कंडवि णरकण अवर वि करेणु
उड्डावमि अयसतुसोहरेणु।
भडु को वि भणइ हुइ खंडखंडि
महु करु पेक्खेज्जसु पक्खितोडि।
सुँदरि गयणंगणि लंवमाणु
अविमुक्कवेरि दावियकिवाणु।
अह धरणिघुलिउ लइ रिउ विहत्तु
तुह मंगलंसुकज्जलविलित्तु।
जं च्छहि वहुरुहिरें किलिण्णु
परिमुक्कदोहणारायभिण्णु।
वच्छयलु महारउ तं जि लेहि
सघुसिणु करयलु अहिणाणु देहि।
हलि सामलंगि उप्फुल्लवयणु
जइ णिवडिउं पेच्छहि तंवणयणु।

घत्ता—तो मेरउ सिरु तरुणि तुहुं चित्ततुलारोहेण विवेयहि।।
सहुं पत्थिवपरिवालिएण सरिसउ किं व ण सरिसउ जोयहि।।६।।

७

सेनाओ का आमना सामना.—

छुडु गज्जिय गुरु संगामभेरि
णं भुक्खिय तिहुयणु गिलिवि मारि।
छुडु णिग्गउ भुयवलि साहिमाणि
छुडु एत्तहि पत्तउ चक्कपाणि।

यदि गीध आँतों को लेकर चले जाते है तो मेरे मरण का मनोरथ पूरा हो जाता है। कोई सुभट कहता है कि जो मै हाथ देता हूँ, मै गजदाँतों के मूसल निकालकर लाऊँगा। योद्धा समूह और हाथियों को चूर-चूर कर मै अयशरूपी भूसा की धूल उड़ाऊँगा? कोई सुभट कहता है हे सुन्दरी, आकाश रूपी आँगन मे लम्वमान (लम्वा फैला हुआ) जिसने शत्रु को नही छोड़ा है, और तलवार का प्रदर्शन किया है, ऐसे मेरे हाथ को, टुकडे-टुकडे होने पर तुम पक्षी के मुख मे देखोगी? अथवा शत्रु के द्वारा विभक्त, धरती पर पडे हुए, तुम्हारे मगलाश्रुओं और काजल से लिप्त, अत्यधिक रुधिर से आर्द्र, छोडे गये लम्वे-लम्वे तीरो से विदीर्ण यदि तुम मेरे वक्षःस्थल को देखो तो उसे ले लेना और अपने केशर सहित हाथ की पहचान देना। हे श्यामलांगी, यदि तुम मेरे खिले हुए चेहरे और रक्त नेत्रो वाले—

घत्ता—मेरे सिर को गिरा हुआ देखो, तो तुम उसे अपने चित्तरूपी तराजू पर तौल कर पहचान लेना और स्वय देख लेना कि वह राजा का परिपालन करने वाले के सदृश है—या सदृश नही है? ॥६॥

७

सैन्यो का आमना-सामना

शीघ्र ही सग्राम भेरी वज उठी मानो त्रिभुवन को निगलने के भूखी हो उठी हो। स्वाभिमानी वाहुवली शीघ्र ही निकल पडा। शीघ्र ही इस ओर चक्रवर्ती आ गया।

छ्डु कालें णीणिय दीह जीह
पसरिय माणुसमंसासणीह।
थिय लोयवाल जीवियणिरीह
डोल्लिय गिरि रुंजिय गहणि सीह।
छ्डु भडभारें ढलहलिय धरणि
छ्डु पहरणफुरणें हसिउ तरणि।
छ्डु चंदुवलाइं पलोइयाइ
छ्डु उहयबलाइं पधाचियाइ।
छ्डु मच्छरचरियइं वड्ढियाइ
छ्डु कोसहु खग्गइं कड्ढियाइं।
छ्डु चक्कइ हत्थुग्गामियाइं
छ्डु सेल्लइं भिच्चहि भामियाइ।
छ्डु कोतइ धरियइं समुहाइं
धूमंधइं जायइ दिम्मुहाइ।
छ्डु मुट्ठिणिवेसिय लउडिदंड
छ्डु पुंखुज्जल गुणि णिहिय कंड।
छ्डु गय कायर थरहरियप्राण
छ्डु ढोइय सदण ण विमाण।
छ्डु मेंठचरणचोइयमयग
छ्डु आसवारवाहियतुरग।

घत्ता—छ्डु छ्डु कारणि वसुमइहि सेण्णइं जाम हणंति परोप्परु ॥
अंतरि ताम पइट्ठु तहि मंत्ति समुब्भिवि णियकरु ॥७

८

मन्त्रिवृद्धों का आह्वान

जहिं बलह मज्झि जो मुयइ वाण
तहु होसइ तणिय आण।
त णिसुणिवि सेण्णइ सारियाइं
चडियइ चावइं उत्तारियाइ।

शीघ्र ही काल ने अपनी लम्बी जीभ प्रेरित की और मनुष्यो के मांस को खाने की इच्छा से उसे फैला लिया। जीवन से निरीह होकर लोकपाल स्थित हो गये। पर्वत हिल उठे और जगल में सिंह दहाड़ उठे। शीघ्र ही प्रचण्ड सेनाएँ देखी गयी, शीघ्र उभयबल दौड़ने लगे। ईर्ष्या से भरे हुए चरित (आचरण) बढने लगे। शीघ्र ही म्यानो से तलवारें निकाल ली गयी, शीघ्र ही चक्र हाथ से चलाये जाने लगे, शीघ्र ही भृत्यो के द्वारा सेल घुमाये जाने लगे। शीघ्र ही भाले सामने धारण किये गये, दिशाओ के मुख धुएँ से अन्धे हो गये। शीघ्र ही मुट्ठी मे लकुटदण्ड ले लिये गये, शीघ्र ही पुंख सहित तीर डोरी पर चढा लिये गये। शीघ्र ही महावतो के पैरो से हाथी प्रेरित कर दिये गये। शीघ्र ही घुडसवारो से तुरग चला दिये गये।

घत्ता—शीघ्र ही धरती के लिए सेनाएँ जब तक एक दूसरे पर आक्रमण करती है तब तक अपने हाथ उठाकर मन्त्री उन दोनो के बीच प्रविष्ट हुए और बोले ॥७॥

८

मन्त्रिवृद्धो का आह्वान

"दोनो सेनाओ के बीच जो बाण छोडता है, उसे श्री ऋषभनाथ की शपथ।" यह सुनते ही सेनाएँ हट गयी और चढे हुए धनुष उतार लिये गये।

त णिसुणिवि रहसाऊरियाइ
वज्जंतइं तूरइं वारियाइं ।
तं णिसुणिवि धारापहसियाइ
करेवालइं कोसि णिवेसियाइ ।
तं णिसुणिवि णिद्धंगइं घणाइं
णिम्मुक्कइं कवयणिवंधणाइं ।
त णिसुणिवि मय मायंग रुद्ध
पडिगयवरगंधालुद्ध कुद्ध ।
त णिसुणिवि मच्छर भावभरिय
हरि फुरुहुरंत धावंत धरिय ।
रह खंचिय कड्ढि पग्गहोह
वारिय विधंत अणेय जोह ।

घत्ता—परिसेसियरणपरियरइं गुरुयणचरणसवहसंणिहियइ ।।
सेण्णइं उज्झियकलयलइं थक्कइं कुड्डि णाइं आलिहियइं ।।८।।

९

भरत वाहुवली की तुलना

पणमियसिरेहिं मउलियकरेहिं
वाहुवलि भरहु महुरक्खरेहिं ।
उग्गमियरोसपसमंतएहिं
विण्णि वि विण्णविय महंतएहिं ।
तुम्हइ विण्णि वि जण चरमदेह
तुम्हइं विण्णि वि जयलच्छिगेह ।
तुम्हइं विण्णि वि अखलियपयाव
तुम्हइ विण्णि वि गभीरराव ।

यह सुनकर हर्ष से आपूरित बजते हुए तूर्य हटा लिये गये। यह सुनकर धाराओं का उपहास करने वाली तलवारें म्यानों के भीतर रख ली गयीं। यह सुनकर चमकते हुए सघन कवच-निबन्धन खोल दिये गये। यह सुनकर मतवाले प्रतिगजों की वरगन्ध से लुब्ध और क्रुद्ध गज अवरुद्ध कर लिये गये। यह सुनकर ईर्ष्याभाव से भरे हुए फड़फड़ाते हुए अश्व रोक लिये गये। रथ रह गये, लगाम खींच ली गयी। वेधते हुए अनेक योद्धाओं को मना कर दिया गया।

घत्ता—युद्ध की साज-सामग्री को दूर हटाती हुई, गुरुजनों की शपथ से रोकी गई दोनों सेनाएँ कलकल शब्द को छोड़कर इस प्रकार स्थित हो गयीं, जैसे दीवाल पर चित्रित कर दी गयी हों। ८॥

९

भरत बाहुबली की तुलना

अपने सिरों से प्रणाम करते हुए, दोनों हाथ जोड़े हुए क्रोध को शान्त करते हुए मन्त्रियों ने मधुर शब्दों में निवेदन किया, "आप दोनों चरम शरीरी हैं, आप दोनों विजय लक्ष्मी के घर हैं, आप दोनों अस्खलित प्रतापवाले हैं, आप दोनों गम्भीर वाणीवाले हैं,

तुम्हइं विण्णि वि जगधरणथाम
तुम्हइं विण्णि वि रामाहिराम ।
तुम्हइं विण्णि वि सुरह मि पयंड
महिमहिलहि केरा बाहुदंड ।
तुम्हइं विण्णि वि णिवणायकुसल
णियतायपायपंकरुहभसल ।
तुम्हइं विण्णि वि जणजणहु चक्खु
इच्छहु अम्हारउ धम्मपक्खु ।
खरपहरणधारादारिएण
किं किंकरणियरें मारिएण ।
किर काइं वराएं डंडिएण
सीमंतिणिसत्थें रंडिएण ।
दोहं मि केरा मज्झत्थ होवि
आउहु मेल्लिवि खमभाउ लेवि ।

घत्ता—अवलोयंतु धराहिवइ दत्तिउ किज्जउ त्तुत्तु सुजुत्तउ ॥
तुम्हहं दोहं मि होउ रणु सिविहु धम्मणाएण णिउत्तउ ॥९॥

१०

द्वंद्व युद्ध का परामर्श

पहिलउ अवरोप्परु दिट्ठि धरह
मा पत्तलपत्तणचलणु करह ।
बीयउ हसावलिमाणिएण
अवरोप्परु सिंचहु पाणिएण ।
तइयउ पुणु णहि जोयंतु देव
करु करि घिवंत सुरदंति जेंव ।
जुज्झह विण्णि वि णियमल्ल ताम
एक्केण तुलिज्जइ एक्कु जाम ।

आप दोनो विश्व को धारण करने की शक्तिवाले है, आप दोनो ही रमणियो के लिए सुन्दर है, आप दोनो देवो मे भी प्रचण्ड है, आप दोनो धरती रूपी महिला के बाहुदण्ड है। आप दोनो राजा के न्याय मे कुशल है, आप दोनो अपने पिता के चरणरूपी कमलो के भ्रमर है, आप दोनो ही जनता के नेत्र है। इसलिए आप हमारे पक्ष को पसन्द करे। तीखे आयुधो की धार मे विदीर्ण अनुचर समूह के मारे जाने मे क्या? उन बेचारो को दण्डित करने और नारी समूह को विधवा बनाने मे क्या? दोनो के बीच मध्यस्थ होकर आयुध छोडकर और क्षमाभाव धारण करें।

घत्ता—हे राजन् देखिए और युक्तियुक्त कहा हुआ इतना कीजिए। तुम दोनो मे न्याय मे नियुक्त तीन प्रकार का युद्ध हो ॥६॥

१०

द्वंद्व-युद्ध का परामर्श

पहला—एक दूसरे पर दृष्टि डालो, कोई भी अपने पक्ष्म की पलकों को न हिलाये, दूसरे—कमलों के द्वारा सम्मानित पानी के द्वारा एक दूसरे को सींचो, तीसरे—आकाश मे देवता देखते है और जिस प्रकार ऐरावत सूंड को पकड़ता है, आप दोनो राजमल्ल तब तक मल्लयुद्ध करें कि जब तक एक के द्वारा दूसरा हरा न दिया

अवरोप्परु जिणिवि परक्कमेण
गेण्हहु कुलहरसिरि विक्कमेण ।
तणुसोहाहसिय पुरंदरेहि
ता चिंतिउ दोहि मि सुंदरेहि ।
कि दूहवियहि णवजोव्वणोण
कि फलिएण वि कडुएं वणेण ।
कि सलिलें चंडालंकिएण
कि दासे पेसणसंकिएण ।
कि राएं गुरुपडिकूलएण
सुविणीयसुयणसिरसूलएण ।

घत्ता—जे ण करंति सुहासियइं मंतिहिं भासियाइं णयवयणइं ।
ताह णरिंदहं रिद्धि कओ कहिं सीहासणछत्तइं रयणइं ॥१०॥

११

दृष्टि युद्ध

इय चिंतिवि इच्छिउ मतिमंतु
वुड्ढागामि णीसेसु संतु ।
अवलंविउ रोसु ण परियणेहि
आयंबकसणसियलोयणेहिं ।
सकसायभाव आसण्ण ढुक्कु
दोहि मि अवलोइउ एक्कमेक्कु ।
उद्धाणणु पहु मुयवलिहि तोडु
पेच्छाइ रविबिंबु व किरणचंडु ।
हेट्ठिल्ल दिट्ठि उवरिल्लियाइ
णिज्जिय दिट्ठिइ अविहल्लियाइ ।

जाये। पराक्रम से एक दूसरे को जीतकर पराक्रम से कुलग्रह-श्री को ग्रहण करें।" तब अपने शरीर की शोभा से इन्द्र का उपहास करने वाले दोनों सुन्दरों ने अपने मन में विचार किया कि अनिष्ट करने वाले नवयौवन से क्या ? फले हुए कड़ुवे वन से क्या ? चाण्डाल से अलंकृत जल से क्या ? आदेश में शंकित रहने वाले दास से क्या, गुरु से प्रतिकूल और अत्यन्त विनीत सुजन के सिर को पीड़ा पहुँचाने वाले राजा से क्या ?

घत्ता—जो मन्त्रियों के द्वारा भाषित, सुभाषित और नीति वचन नहीं करते उन राजाओं की ऋद्धि कहाँ, और सिंहासन, एवं रत्न कहाँ ? ॥१०॥

११

दृष्टि युद्ध

यह विचार कर उन्होंने मन्त्री की मन्त्रणा पसन्द की। वृद्धाश्रित सब कुछ उत्तम होता है। लाल, सफेद एवं श्वेत लोचन वाले परिजनों ने क्रोध का आलम्बन नहीं लिया। कषायभाव से वे एक दूसरे के निकट पहुँचे, दोनों ने एक दूसरे को देखा। राजा भरत ऊँचा मुख किये बाहुबलि का मुख देखता है, जैसे किरण प्रचण्ड रविबिम्ब को देखता है। ऊपर की अविचलित दृष्टि से नीचे की दृष्टि जीत ली गयी,

णं होंति कुगइ पवमगईइ
विसयासा इव मुणिवरमईइ ।
ण तान्मि भग्गी विउरईइ
णं मेलभित्ति गगाणईइ ।
णं कमलपति ससियरतईइ
कुमुओलि व मउलिय रविरुईइ ।

घत्ता–ठिउ हेट्ठामुहुउ चक्कवइ णिज्जिउ पडिभउदिट्ठिपहावहिं ॥
घल्लियणवकुसुमंजलिहिं णंदातणुरुहु संथुउ देवहिं ॥११॥

१०

जलयुद्ध

मओमत्तमायंगलीलावहारा
रमावासवच्छत्थलोलंतहारा ।
फणिंदेण चंदेण इंदेण दिट्ठा
पुणो दो वि राया सरंते पइट्ठा ।
सरंतेहिं आलोइय सच्छणीरं
विसालं गहीरं तुसारोहतारं ।
महापोमसुत्ताहिमाणिक्कदित्त
मरुद्धूयतिगिच्छिधूलीविलित्तं ।
महीरगरंगंकल्लोलमालं
मरालीपहालग्गलीलामरालं ।
सिरीणेउरालवणच्चतमोरं
भिसाहारपूरंतचंचूचऊरं ।
तरंतामरं रोयरारद्धकीलं
जलुब्भंतमीणं लयापत्तणीलं ।

जिसमे चन्द्रमा के प्रतिविम्ब के हरिण पर सिंह झपट रहा था, उठती हुई फेनावली से तट ढके हुए थे, गूंजते हुए भ्रमरो का कोलाहल हो रहा था, जो सारसो से भरा हुआ था, सूर्य से मुक्त किरणावली से फूल खिले हुए थे, जिनमे अनेकप क्षीन्द्रो और यक्षेन्द्रो के शब्द सुनाई दे रहे थे और जो डूबते हुए गजो की सूंडो से मर्दित था।

घत्ता—ऐसे उस सरोवर में वे दोनो उतरे। स्वामी ने अपने भाई के ऊपर जल की धारा छोडी मानो हिमालय मे गंगा नदी धरती के ऊपर आ रही हो ॥१२॥

१३

जलयुद्ध

वक्ष:स्थल पाकर वह फिर मुडी और दुष्ट की मित्रता की तरह नीचा मुख कर गिर पडी। उस सुन्दर पर दौडती हुई ऐसी मालूम हो रही थी, जैसे मन्दराचल पर तारावली हो। मानो मरकत महीधर पर चन्द्रमा की कान्ति हो, मानो नील वृक्ष पर हस पंक्ति हो, हिलती हुई धारा ऐसी मालूम होती थी, मानो कण्ठ से भ्रष्ट स्वच्छ हार हो, मानो चचल लहरो से विस्फारित गगा नदी हो, कि जिसमें आकाश तक मत्स्य और शिशुमार उछल रहे थे। तब क्रुद्ध होकर सुनन्दा के पुत्र बाहुबलि ने भरत के ऊपर भारी जलधारा छोडी। उसने राजा को चारो ओर से आच्छादित कर लिया, मानो जिनेन्द्र भगवान् की कीर्ति ने तीनो लोको को ढक लिया हो,

रसोच्छाहिसारंगडेवंतसोहं
समुत्तुंगफेणावलीच्छण्णतूहं ।
झुणतालिकोलाहलं सारसिल्लं
झणुम्मुक्कपायावलीफुल्लफुल्लं ।
सुयाणेयपक्खिदजक्खिदसद्दं
पमज्जंतहत्थिदसोंडाविमद्दं ।

घत्ता—तहि विण्णि वि जण ओयरिय पहुणा घित्त जलजलि भायहु ॥
वियेलइ उप्परि मेहलहे णं मंदाइणि हिमहरिरायहु ॥१२॥

१३

जलयुद्ध

वच्छत्थलु पाविवि पुणु वि वलिय
हेट्ठामुह खलमेत्ति व घुलिय
कडियलि धावंती सुंदरासु
दीसइ तारालि व मंदरासु
णं मरगयमहिहरि चंदकंति
णं णीलमहीरुहि हंसपंति ।
डेवंती दीसइ सलिलधार
णं कंठभट्ठ कंठिय सुतार ।
णं सुरसरि चवलतरंगफार
गयणुल्ललंत झससुंसुमार ।
आरूसिवि पुणु भरहहु विमुक्क
णंदातणएं गुरुजलझलक्क ।
पच्छाइउ चउदिसु ताइ राउ
धवलइ जिणकित्तिइ णं तिलोउ ।

जिसमें चन्द्रमा के प्रतिविम्व के हरिण पर सिंह झपट रहा था, उठती हुई फेनावली से तट ढके हुए थे, गूँजते हुए भ्रमरों का कोलाहल हो रहा था, जो सारसों से भरा हुआ था, सूर्य से मुक्त किरणावली से फूल खिले हुए थे, जिसमे अनेकप क्षीन्द्रो और यक्षेन्द्रो के शब्द सुनाई दे रहे थे और जो डूबते हुए गजो की सूँडो से मर्दित था।

घत्ता—ऐसे उन सरोवर में वे दोनो उतरे। स्वामी ने अपने भाई के ऊपर जल की धारा छोडी मानो हिमालय से गगा नदी धरती के ऊपर आ रही हो ॥१२॥

१३

जलयुद्ध

वक्ष स्थल पाकर वह फिर मुडी और दुष्ट की मित्रता की तरह नीचा मुख कर गिर पडी। उस सुन्दर पर दौडती हुई ऐसी मालूम हो रही थी, जैसे मन्दराचल पर तारावली हो। मानो मरकत महीधर पर चन्द्रमा की कान्ति हो, मानो नील वृक्ष पर हंस पंक्ति हो, हिलती हुई धारा ऐसी मालूम होती थी, मानो कण्ठ से भ्रष्ट स्वच्छ हार हो, मानो चचल लहरो से विस्फारित गगा नदी हो, कि जिसमें आकाश तक मत्स्य और शिशुमार उछल रहे थे। तब क्रुद्ध होकर सुनन्दा के पुत्र बाहुबलि ने भरत के ऊपर भारी जलधारा छोडी। उसने राजा को चारो ओर से आच्छादित कर लिया, मानो जिनेन्द्र भगवान् की कीर्ति ने तीनो लोको को ढक लिया हो,

कणयइरि व सरयब्भावलीइ
णं उययरिहरि सराहररुईइ।
सलिलें णवसोत्तइ पूरियाइं
बहुपरियणसयणइं जूरियाइं।
उग्घोसिउ विजउ महास हि
बाहुबलिणराहिवपक्क हि।
घत्ता—सीसु धुणंतु मुयंतु छलु सरवरवारिपवाहें सित्तउ ।।
पडिओसारियउ पुहइवइ णाइं करिंदु करिंदे जित्तउ ।।१३।।

१८

जलभरियसुणासावसएण
वड्ढपडिभडबलसंसएण।
वज्जियमंडलियकुरंगएण
परिहच्छें सरतीरगएण।
रोसारुणच्छिरजियदिसेण
सप्पेण व अइआसीविसेण।
सीहेण व उद्धुयकेसरेण
णिब्भच्छिउ भाइ णरेसरेण।
पीलिज्जइ तेरउ उच्छु चाउ
रसु पिज्जइ खज्जइ गुलु सुसाउ।
फुल्लसर वि कयधम्मेल्लसोह
पइं जेहा कहिं लब्भंति जोह।
अवियाणियखत्तियधम्मसार
महिलाण गोहहो मोट्टियार।
किं किर वयणेण पलोइएण
जीवंतहं सलिलें ढोइएण।

मानो शरद् की मेघावली ने स्वर्णगिरि को, मानो चन्द्रमा की किरणमाला ने उदयाचल को ढक लिया हो। जल में नव स्रोत पूरे हो गये, वह परिजन और स्वजन पीड़ित हो उठे। तब बाहुबलि राजा के अनुचरो ने महास्वरो में विजय की घोषणा कर दी।

घत्ता—अपना सिर पीटता और छल छोड़ता हुआ तथा सरोवर के जलप्रवाह मे अभिसिंचित पृथ्वीपति भरत हटाया गया। पृथ्वीपति भरत उसी प्रकार जीत लिया गया, जिस प्रकार हाथी से हाथी जीत लिया जाता है ॥१३॥

१४

जिनकी नाक की नली जल से भर गयी है, जिसे प्रतियोद्धा के बल से संशय बढ़ गया है, जिसने माण्डलीक राजा रूपी हरिणो को छोड़ दिया है, ऐसे नरेश्वर भरत ने वेग से तीर पर जाकर क्रोध से लाल आँखो से दिशा को रंजित करते हुए अत्यन्त विषाक्त दाढ़ वाले सर्प के समान अथवा अयाल उठाए हुए सिंह के समान नरेश्वर ने भाई की भर्त्सना की—तुम्हारे इक्षु रूपी धनुष को पेला जाता है, रस पिया जाता है, और सुस्वादु रस खाया जाता है, (कामदेव होने के कारण) फूल तुम्हारे तीर है और जिनसे चोटी की शोभा की जाती है, वे ऐसे भी है, तुम जैसे योद्धा कहाँ पाए जाते है ? जिसने क्षत्रिय धर्म के सार को नहीं जाना ऐसे तुम महिलाओ, के प्रमुख का अहंकार करने वाले हो ? मुख के अवलोकन से क्या ? और जीवितो पर पानी डालने से क्या ?

ए एहि देहि भुयबलहु लोय
रज्जु जि एत्तउ होइ जोय।
ता भणइ जइ वि णिक्कलु जि भरहि
धणुवाण महारा काइं करहि।
जाणंतु वि देवि णिरत्थु भणहि
पियविरहुब्वेइउ कि कणहि।
महिलाण मोहु हउ सयणमग्गि
मोहाण मोहु कड्ढियइ खग्गि।

घत्ता—जइ सयणत्तणु मण्णियउं तो किं मग्गहि पुहइ भडारा ॥
णियधणकणमयकयविवस पत्थिव सयल होंति विवरेरा ॥१४

१५

वाहुयुद्ध

तओ भुयमंडणि भायर लग्ग
णरिंदसिरोमणि घट्ठपयग्ग।
कुलीण कुकारणि माणमहल्ल
पहाण महाबल विण्णि वि मल्ल।
सुकंचणकुंडलमंडियगंड
पसारियवाहु सरोस पयंड।
च्चिराउस चंदचडावियणाम
सुविक्कमवंत णराहिवकाम।
समत्थ सिरीण रईण णिकेय
महारह भारह भक्खरतेय।
असंक खगंक क्षसंक विपंक
जसंसुपसाहियपुण्णससंक।

लो आओ, मुझसे बाहुयुद्ध हो, जिससे आज ही अन्तर स्पष्ट हो जाए।" तब जिनेन्द्र पुत्र बाहुबलि ने कहा "तुम व्यर्थ क्यों भौंकते हो, मेरे धनुषबाण का क्यों मजाक उड़ाते हो? जानते हुए भी हे देव व्यर्थ बोलते हो, प्रियविरह से खिन्न तुम क्या करते हो? शयन मार्ग में, मैं महिलाओं का साथी हूँ, और तलवार निकलने पर, योद्धाओं का योद्धा हूँ।

घत्ता—यदि तुमने सज्जनता मानी है तो हे आदरणीय धरती क्यों मांगते हो? अपने धन स्वर्ण और मद की विवशता के कारण सभी राजा उल्टे होते हैं ॥१४॥

१५

बाहुयुद्ध

उस समय महेन्द्र-शिरोमणि दोनों भाई अपने पैरों के अग्रभाग को रगड़ते हुए बाहुयुद्ध करने लगे। दोनों ही कुलीन और मान में महान् पृथ्वी के कारण (लड़ गये)। दोनों ही प्रधान और महाबल मल्ल। दोनों ही मकुचित कुण्डलों से अलंकृत कपोल, दोनों ही क्रुद्ध और प्रचण्ड अपने बाहु फैलाये हुए, विनय, चन्द्रमा के समान प्रसिद्ध नाम, विक्रम से दुष्पन नराधिपकी कामना वाले और समर्थ, लक्ष्मी और नीति के आश्रय, महारथी आभा से युक्त और सूर्य की तरह तेजस्वी। शस्त्र रहित गरुड़ और मत्स्य के चिन्ह वाले, पक्ष से सहित, और यश की किरणों से पुण्यरूपी चन्द्रमा का प्रसारित करने वाले थे।

मिलंति मिलेप्पिणु हत्थि धरंति
धरेप्पिणु देह घडेवि पडंति।
पडंत जि गाहणिबंधणु देंति
कडोयतु कंठु णिरंभिवि ठंति।
विरुद्ध वि गाह वलेण मुयंति
भुएप्पि णु उट्ठि उवि अत्ति वलंति।
अलभुयजुज्झविहाणसयाइं
पचप्पणकड्ढणवेढणयाइं।
करंति वि धीर अविद्दवियंग
णिरंकुस णाइ मयंध मयग।
पयाणभरस्स धरित्ति ण तिण्ण
विमुक्क रवेण दिसाकरि वुण्ण।
फलोणयपायवपिट्ठ व छुण्ण
णहे गय पक्खि वणेयर रुण्ण।
ण चल्लिय कुच्चिय कुंज फणिंद
दरीकुहरेसु णिलीण पुलिंद।
तओ हयमाणिणिमाणमएण
णरामरसंगरलद्धजएण।
सुरिंदकरीकरथोरभुएण
अणिंदजिणिंदसुणंदसुएण।
पहुस्स करेण करा परतावि
परेण थिरेण धरेण कमावि।

घत्ता—कुंअरें राउ समुद्धरिउ णायणियविणिसेवियकंदरु॥
कयइच्छाकोउहलेण किं ण पुरंदरेण गिरि मंदरु॥१५॥

१६

भरत की पराजय

उद्धरिउ सुपुत्तें ण सुवसु
कमलारेण ण रायहंसु।

वे दोनों मिलते हैं मिलकर हाथ पकड़ते हैं। हाथ पकड़ कर देह से लगकर गिरते हैं। गिरते हुए मजबूत पकड़ करते हैं और कमर और गले को रुद्ध कर रह जाते हैं। विरुद्ध भी पकड़ को बल से छुड़ा लेते हैं, छूटकर उठकर शीघ्र मुड़ते हैं, और समर्थ बाहुयुद्ध के सैकड़ों विधान (दाँवपेंच जैसे चाँपना, काढ़ना, वेढ़न (लिपटना) आदि) करते हैं। दोनों ही धीर और अस्खलितअंगवाले तथा निरंकुश हैं, जैसे मदांध महागज हों। पैरों के भार से धरती उन्होंने नहीं छोड़ी। शब्द से दिग्गज दुःखी हो गये, पगों से उन्नत वृक्षों की पीठ छिन्न हो गयी, पक्षी आकाश में चले गये, वनचर खिन्न हो उठे, क्रूर नागराज वहीं संकुचित हो गये—चल नहीं सके, और भील घाटियों और गुफाओं में छिप गये। उस समय मानिनियों के मान और मद का हनन करने वाले मनुष्यों और देवों के संग्राम में जय प्राप्त करने वाले, ऐरावत की सूंड के समान बाहुवाले अनिन्द्य जिनेन्द्र और सुनन्दा के पुत्र कुमार ने प्रभु के हाथ को हाथ से पीड़ित कर दूसरे स्थिर हाथ से पकड़ कर आक्रमण कर—

घत्ता—राजा को उसी प्रकार उठा लिया, जिस प्रकार नागों की स्त्रियों (नागिनों) से जिनकी गुफाएँ सेवित हैं, ऐसे मन्दराचल को अपनी इच्छा के कुतूहल मात्र से इन्द्र ने उठा लिया हो ॥१५॥

१२

भरत की पराजय

मानो समुद्र ने अपने दम का उद्धार किया हो, मानो वनमानव ने गजराज को उठा लिया हो,

अप्पउ लच्छिविलासें रजहि
लइ महि तुहुं जि णराहिव भुंजहि।
णहणिवडियणीलुप्पलविट्ठिहि
हउं पुणु सरणु जामि परमेट्ठिहि।
तं णिसुणिवि भरहेसें वुच्चइ
परिहवदूसिउ रज्जु ण रुच्चइ।
घत्ता–अंतेउरसयणहं परियणहं णीसेसहं मि णियंतहं।।
हउं जित्तउ पइं तुहुं सइ खंविउं खम भूसणु गुणवंतहं ।।२।।

३

क्षमायाचना

जइ पइं णियभुएहिं अदोलिउ
भूमंडलि तडत्ति अप्फालिउ।
तो किं चक्कु रयणु मइं रक्खइ
पुणु जीयंतु को वि किं पेक्खइ।
पइं जित्ती खमा वि खमभावें
पइं तासिउ कउसिउ सपयावें।
पइं जिह तेयवंतु ण दिवायरु
णउ गंभीरु होइ रयणायरु।
पइं दुज्जसकलंकु पक्खालिउ
णाहिणरिंदवंसु उज्जालिउ।
पुरिसरयणु तुहुं जगि एक्कल्लउ
जेण कयउ महु वलु वेयल्लउ।
को समत्थु उवसमु पडिवज्जइ
जगि जसढक्क कासु किर वज्जइ।
पइं मुएवि तिहुयणि को चंगउ
अण्णु कवणु पच्चक्खु अणंगउ।

अपने को लक्ष्मी के विलास से रंजित कीजिए, यह धरती आप ही लें और उसका भोग करें। मैं, जिन पर आकाश से नीलकमलों की वृष्टि हुई है, ऐसे परमेष्ठी आदिनाथ की शरण में जाता हूँ।" यह सुनकर भरतेश्वर ने कहा—"पराभव से दूषित राज्य मुझे अच्छा नहीं लगता।"

घत्ता:—अन्तःपुर, स्वजनों, परिजनों और शेष लोगों के देखते हुए मैं तुम्हारे द्वारा जीता गया और तुम्हारे द्वारा स्वयं क्षमा किया गया। तुम गुणवानों में क्षमाभूषण हो ॥२॥

३

भरत की क्षमा याचना

जब तुमने अपने बाहुओं से आन्दोलित किया और तड़ करके भूमि पर पटक दिया, तो चक्ररत्न मेरी क्या रक्षा करता? फिर जीवित रहते हुए कोई क्या देखता? तुमने अपने क्षमाभाव से क्षमा को जीत लिया, तुमने अपने प्रताप से कौशिक (इन्द्र) को भी त्रस्त किया। तुम जितने तेजस्वी हो, उतना दिवाकर भी तेजस्वी नहीं है। तुम्हारे समान समुद्र भी गम्भीर नहीं है। तुमने अपयश के कलंक को धो लिया है और नाभिराज के कुल को उज्ज्वल कर लिया है। तुम विश्व में अकेले पुरुष रत्न हो जिसने मेरे बल को भी विफल कर दिया। कौन समर्थ व्यक्ति शान्ति को स्वीकार करता है? विश्व में किसके यश का डंका बजता है? तुम्हें छोड़कर त्रिभुवन में कौन भला है? दूसरा कौन प्रत्यक्ष कामदेव है?

अण्णु कवणु जिणपयकयपेसणु
अण्णु कवणु रविखयणिवसासणु।

घत्ता–ससि सूरहो मंदरु मंदरहो इंदहो इंदु अणीयउ।।
पर एक्कहु णंदाएविसुय तुह ण णिहालमि बीयउ।।३।।

८

क्षमा याचना-भरत का अयोध्या गमन

जं तुहुं दुव्वयणेहिं णिब्भच्छिउ
जं दिट्ठीइ सरोसु णियच्छिउ।
जं सरवाणिएण णिरु सित्तउ
जं जुज्झंतें पेल्लिवि घित्तउ।
तं एवहिं खम करि महुं बंधव
जिणवरतणय तिजगमणसंभव।
आउ जाहु उज्झाउरि पइसहि
अज्जु जि तुहुं सिंहासणि वइसहि।
पट्टु णिवंधमि भालि तुहारइ
अवक्कित्ति जीवउ तुह केरइ।
एवहिं रज्जु करतु लज्जमि
एवहिं परमदिक्ख पडिवज्जमि।
एवहिं इंदियछदु विवज्जमि
एवहिं पुण्णु ण पाउ समज्जमि।
एवहिं कम्मणिबंधण भंजमि
एवहिं जोएं प्राण विसज्जमि।

घत्ता–बंधव वणवासहु पट्ठविवि घर
मइं एवहिं दुज्जसभायणेण भायर

दूसरा कौन जिनपदो की सेवा करने वाला है और दूसरा कौन नृप शासन की रक्षा करने वाला है ।

घत्ता—शशि सूर से, मन्दर मन्दराचल से और इन्द्र इन्द्र से उपमित किया जाता है, परन्तु हे नन्दादेवी के पुत्र, एक तुम्हारा दूसरा प्रतिमान (उपमान) दिखाई नहीं देता ॥३॥

४

भरत की क्षमा याचना

"जो मैंने दुर्वचनो से निन्दा की, जो दृष्टि से क्रोधपूर्वक देखा, जो सरोवर के पानी से सिक्त किया, और जो लडते हुए ठेलकर गिरा दिया, हे मेरे भाई, उनके लिए तुम मुझे क्षमा करो, आओ और अयोध्या के लिए जाओ, तुम आज भी सिंहासन पर बैठो, मैं तुम्हारे भाल पर पट्ट बाँधूँगा। यह अर्ककीर्ति तुम्हारा जीवन होगा। इस समय राज्य करते हुए मैं लजाता हूँ। अब मैं परम दीक्षा ग्रहण करूँगा। इस समय इन्द्रिया के प्रपच को छोडूँगा। मैं इस समय पुण्य या पाप का आदर नही करूँगा। इस समय कर्मों के निबन्ध को नष्ट करूँगा। इस समय योग से प्राणो का विसर्जन करूँगा।

घत्ता—हे भाई, मैं वनवास में प्रवेश करूँगा। धरती के मोह के रस से भ्रान्त अपयश के भाजन इस जीवन को जीने से क्या? ॥४॥

वाहुवली का उत्तर

सज्जणकरुणें सज्जणु कपइ
त णिसुणिवि भरहाणुउ जपइ।
जइयहु हुउ सिसुत्ति सहकीलिउ
तइयहु पइं वि किं ण परितोलिउ।
मज्झु वि तुज्झु वि कवणु पराहउ
मज्झु वि तुज्झु वि कवणु महाहउ।
जे गय ते सयल वि मग्गिवि मिसु
भावइ भोउ ताहं णावइ विसु।
तेत्थु ण काइं वि दोसु तुहारउ
वंदणिज्जु तुहु जगि गरुयारउ।
जइ एवहिं धरित्ति ण समिच्छहि
ता जें दिण्णी तहु जि पयच्छहि।
तहि अवसरि वयणेहिं णिरोहिउ
मंतिहिं भूमिणाहु संवोहिउ।
सुउ संताणि थवेवि महाबलि
गउ कैलासु परायउ भुयबलि।

६

वाहुवली का कैलाश के लिए प्रस्थान और दीक्षा

एत्तहि गिरिवरि बाहुवलीसें
अइदूराउ पणावियसीसें।
णिट्ठाणिट्ठउ णट्ठाणट्ठउ
दिट्ठउ भट्टदुट्ठकम्मट्ठउ।

५

बाहुबली का प्रत्युत्तर

"सज्जन की करुणा से सज्जन द्रवित होता है।" यह सुनकर भरतानुज बाहुबलि कहता है—"जब मैं शैशव में तुम्हारे साथ खेलता था, तब क्या तुमने मुझे नहीं उठाया था। मेरा और तुम्हारा कौन-सा पराभव। मेरा तुम्हारा कौन-सा महायुद्ध। जितने भी लोग गये हैं वे बहाने की खोज करके गये हैं, उनको भोग ऐसे लगे जैसे विष हों। यहां भी तुम्हारा कोई दोष नहीं है, तुम जग में महान् और वन्दनीय हो। यदि इस समय तुम धरती की इच्छा नहीं करते तो जिसने तुम्हें यह दी है, वह उसी को दो।" उस अवसर पर मन्त्रियों ने मना किया, और भूमिनाथ को अपने शब्दों में सम्बोधित किया। बाहुबली अपने पुत्र महाबली को परम्परा में स्थापित कर चले गये और कैलाश पर जा पहुंचे।

घत्ता—नरेन्द्रश्री और धरती को छोड़ते हुए और वन को जाते हुए महान् अभिमानी विषण्णमन राजा भरत को मन्त्रियों द्वारा बलपूर्वक अयोध्या ले जाया गया ॥५॥

६

वहां कैलाश पर्वत पर अत्यन्त दूर से सिर से प्रणाम करते हुए बाहुबलीश्वर ने निष्ठा से निष्ठ, अनिष्ट का नाश करने वाले, दुष्ट आठ कर्मों के नाशक जिनवर को देखा।

अइवट्ठोट्ठष्टुगार्गिट्ठोहि
हेट्ठाकोट्ठगर्ज्जिहि दप्पिट्ठहि ।
जो णउ वीगइ कुंठियवार्गोहि
मसारिहिं मज्जर्थिहि सवार्थिहि ।
वयणुग्गयगहीरजयकारें
सो जिणु सथुउ तेण कुमारें ।
रोसु तु तुज्झु रोसेण व णिग्गउ
राउ ण जाणहुं सह्हि लग्गउ ।
पइं मेल्लिवि दोसु वि दोसायरि
थियउ फलकमिसेण व ससहरि ।
तुह झाणग्गिभएण व णट्ठउ
मोहु मोहणोसहिहिं पइट्ठउ ।
पइं तासिउ वद्ढारियसगउ
लोहु वि सव्वलोहभावं गउ ।
कंदप्पहु वि दप्पु पइं साडिउ
कालहु उप्परि कालु भमाडिउ ।
तुहुं णिग्गंथु अणीहियगंथउ
तवणियमं थउ दावियपंथउ ।
विज्जा–णावइं पइ जम्मंवुहि
उल्लंघिउ तुहुं रवि हरि हरु विहि ।
एम देउ गरु भत्तिइ वंदिवि
मिच्छादुयिकउ गरहवि णिंदिवि ।
णावइ भवतरुमूलुप्पाडणु
फरिचि ससिरवरि चिहुरुप्पाडणु ।
घत्ता–सर पंच वि घल्लिय वम्महेण धणु रइ विण्णि वि मुक्कइं ।।
पडिवण्णइं पच महव्वयइं पयजुयपाडियसक्कइं ।।६।।

बड़ी-बड़ी दाढ़ों, ओठों वाले क्रोधियों और पापियों, अर्धमुग्ध बैठे हुए घमण्डियों, कुण्ठित प्रमाण-वादियों और माँस खाने वाले, मद्य पीने वाले चाण्डालों द्वारा जो नहीं देखे जाते, ऐसे जिन भगवान् को शब्दों से निकलती हुई जय-जयकार ध्वनि करने वाले कुमार ने स्तुति की—"हे देव, क्रोध तुम्हारे क्रोध से ध्वस्त हो गया, राग भी मैं जानता हूँ सन्ध्या में जा लगा, दोष भी तुम्हें छोड़कर चन्द्रमा में स्थित हो गया है, वह उसमें कलंक के रूप में दिखाई देता है। तुम्हारी ध्यान रूपी अग्नि के भय से नष्ट हुआ मोह औषधियों में प्रवेश कर गया है तुमने शमनगम को बढ़ाने वाले, सबके (स्वर्णादि के) प्रति लोभ बढ़ाने वाले लोभ को समस्त कर दिया है। कामदेव के दर्प को तुमने नष्ट कर दिया, और काल के ऊपर काल को घुमा दिया। तुम परिग्रह को नहीं चाहने वाले निर्ग्रन्थ हो तुम तप के नियम में स्थित और पथ-प्रदर्शक हो। विद्यारूपी नाव से तुमने जन्मरूपी समुद्र को लाँघ लिया, तुमने रवि, हरि, शिव और ब्रह्मा को पार कर लिया।" इस प्रकार भारी भक्ति से वन्दना कर मिथ्या दुष्कृतियों को बुरा-भला कह और निन्दित कर, जैसे संसार रूपी वृक्ष के मूल को उखाड़ने के लिए, अपने सिर के बालों को उखाड़कर—

घत्ता—उन्होंने अपने पाँचों बाण त्याग दिये, काम और रति दोनों को छोड़ दिया, और जिनको इन्द्र चरणों में आदर करता है, ऐसे पाँच महाव्रतों को उन्होंने स्वीकार किया ॥६॥

तपश्चरण

णत्थि उवाणहाउ सयणासणु
मुक्कउ छत्तु असेसु विहूसणु ।
विसहइ दंसमसयसीउण्हइं
छुहजणदुव्वणाइं सयण्हइ ।
चरिय णिसेज्ज सेज्ज रइ अरइ वि
वहवंधणु गयजण वणवसइ वि ।
सीह सरह तणु लग्ग ण वारइ
मुणिउच्चिणहि चित्तु ण पेरइ ।
जल्लमलेंहि मि लित्तउ अच्छइ
वउसक्कारु किं पि ण समिच्छइ ।
असुहसुहेसु समत्तणु मण्णइ
विविहातंक रोय अवगण्णइ ।
लयकएहिं ण मुज्झइ दोहि मि
सक्कारेंहि पुरस्कारेंहि मि ।
अद्दंसण अलाहु रिसिसारउ
पण्णपरीसह सहइ भडारउ ।
वयसमिदिंदियरुंभणु लोउ वि
अच्चेलकावसयजोउ वि ।
ण्हाणविवज्जणु महिसंसोवणु
दंताधोवणु कयठिदिभोयणु ।

घत्ता—वणि णिवसइ दुक्खसयइ सहइ ण चवइ थोवउ जेंवइ ॥
परमित्ति करइ णिद्द वि जिणइ मणु वेरग्गें भावइ ॥७॥

८

एम चरंतु चरित्तु सुदुच्चरु
महिविहरतु पइट्ठु वणंतरु
तहिंथिउ एक्कु वरिसु लवियकरु
वेल्लीवलयहिं वेढिउ ण तरु ।

न तो उनके पास सिरहाना, न शयन और आसन। उन्होंने अशेष आभूषण और छत्र भी छोड़ दिये। वह दंशमशक, शीत और उष्णता सहन करते हैं। क्षुधा, लोगों के दुर्वचन (क्रोध) और तृष्णा सहन करते हैं। चर्या, निषद्या, शय्या, स्त्री, अरति, लोगों के चले जाने और वन में रहने पर, वध बन्धन, सिंह-शरभ और तृण के शरीर में लगने पर भी वह निवारण नहीं करते, मुनि कुशीलता में भी अपने चित्त को नहीं लगाता, सूखे पसीने और मल समूह से लिप्त होने पर भी वह स्थित रहते हैं, यश सत्कार वह कुछ भी नहीं चाहते। अशुभ और शुभ में वह समता भाव धारण करते हैं, विविध आतंक और रोगों की अवहेलना करते हैं, लोगों के द्वारा लगाये गये दोषों में सत्कारों, पुरस्कारों में, मूच्छित नहीं होते। मुनियों में श्रेष्ठ अदर्शन और अलाभ (परिषह) प्रज्ञा परीषह भी वह आदरणीय सहन करते हैं। ईर्या-समिति और इन्द्रियों का निरोध, केशलोंच अचेलकत्व दानयोग, स्नान का त्याग, धरती पर शयन, दांत नहीं धोना और मर्यादा के अनुसार भोजन करना।

घत्ता—वन में निवास करते हैं, सैकड़ों दुःख उठाते हैं, सहते हैं, बोलते नहीं, मौन रहते हैं। सीमित नींद लेते हैं, मन को जीतते हैं, वैराग्य की भावना करते हैं ॥७॥

८

इस प्रकार कठोर चरित्र का आचरण करते हुए, धरती पर वह विहार करते हुए वन के भीतर प्रविष्ट हुए। जहाँ वह एक वर्ष भर [illegible] स्थित रहे, मानो लताओं की बेलों ने उन को घेर लिया हो।

पइ णियभुयवलेण हुउ जोक्खिउ
पइं जि पुणु वि कारुण्ण'रक्खिउ।
पइं महु दिण्णी पुहइ सहहत्थें
तुहुं परमेसरु जगि परमत्थें।
परउवयारि धीर दमवंता
महिमुएवि णियमेणु वसंता।
पइं जेहा जगगुरुणा जेहा
एक्कु दोण्णि जइ तिहुयणि तेहा।
अत्थि रसणफंसणरसलालस
अम्हारिस घरि घरि जि कुमाणुस।
रोसवंत हियपर विस्सभर
पाववहुल परवस अप्पंभर।

घत्ता—हा मइं वहुकम्पपरव्वसेण विसयवलाइं ण महियइं॥
एक्कहो णियजीवहु कारणिण जीवसयाइं त्रि वहियइं॥९॥

१०

वाहुवली की साधना

इदचदवंदारयवंदें
तहिं अवसरि वाहुवलिमुणिंदें।
तिण्णि वि सल्लइं हियउद्धरियइं
तिण्णि वि रयणइं लहु सभवयइ।
तिण्णि वि डंभ मुक्क संखेवें
गारव तिण्णि विवज्जिय देवें।
चउगइकम्मणिवधणरमियउ
सण्णउ चत्तारि वि उवसमियउ।
पंचमहव्वयाइं अविहंडइ
पंचासवदारइं णिच्छडुइ।

बाहुबल से मुझे माप लिया है। और तुम्हीं ने फिर करुणाभाव से मेरी रक्षा की है। तुमने अपने हाथ से मुझे धरती दी है, वास्तव में तुम्हीं जग में परमेश्वर हो। दूसरों का उपकार करने में वीर और शान्त। जो धरती का परित्याग कर अपने नियम में स्थित हो गये। तुम्हारे जैसे और विश्वगुरु ऋषभनाथ जैसे, मनुष्य इस दुनिया में एक या दो होते हैं। लेकिन हम जैसे, रसना और स्पर्श की लालसा रखने वाले खोटे मानुष घर-घर में हैं। क्रोधी, दूसरों का हरण करने वाले, विष से भरे पापबहुल, पराधीन और अपने को भरने वाले।

घत्ता—हा! मैंने बहुकर्मों के परवश होकर विषय वलों को नष्ट नहीं किया और एक अपने जीव के लिए सैकड़ों जीवों का वध किया ॥९॥

१०

बाहुबली की साधना

उस समय इन्द्रों, चन्द्रों और देवों के द्वारा वन्दनीय बाहुबली मुनीन्द्र ने एक जीव से ही गण का निराकरण अपने मन में किया। राग और द्वेष दोनों को छोड़ दिया। हृदय से तीनों शल्यों को निकाल दिया। और तीन रत्नों (सम्यग्दर्शन, ज्ञान और चारित्र) को अपने मन में स्थापित किया। संक्षेप में उन्होंने तीनों प्रकार के दण्ड छोड़ दिये। चार संज्ञाओं और कर्मों के निबन्धन से रहित चारों गतियों को शान्त कर दिया। उनके घोर महाव्रत पञ्चेन्द्रिय से और चोर आस्रवद्वार नष्ट हो गये थे।

पंचिंदियइं कयाइं णिरत्थइं
पंच वि णाणावरणइं गथइं ।
छावासयउज्जमु सविसेसिउ
छज्जीवहं दयभाउ पयासिउ ।
छह लेसह परिणामु वइट्टइ
छ वि दव्वइं पच्चक्खइं दिट्ठइं ।
सत्त भयाइ हयाइं गहीरें
सत्त वि तच्चइ णायइ धीरें ।
अट्ठ वि मय णिट्ठविय अदुट्ठें
अट्ठ सिद्धगुण भरय वरिट्ठें ।
णवविहु बंभचेरु परिपालिउ
णवपयत्थपरिमाणु णिहालिउ ।

घत्ता—दसविहु जिणधम्मु वियाणियउ एयारह हयजडिमउ ।।
अवियारहं धीरह सावयह बारह भिक्खुहं पडिमउ ।।१०।।

११

केवल ज्ञान की प्राप्ति :

तेरह किरियाठाणइ
तेरहभेय चरित्तइं गणियह ।
चोद्दह गथमला वि समुज्झिय
चोद्दह भूयगाम सइ बुज्झिय ।
पण्णारह पमाय मेल्लतें
पुण्णपावभूमिउ जाणतें ।
सोलहविह कसाय पसमतें
सोलहविहवयणेसु रमतें ।
अवि य असजमोह सत्तारह
जाणिवि संपराय अट्ठारह ।

उन्होंने पाँचों इन्द्रियों को व्यर्थ कर दिया था और पाँच ज्ञानावरण की ग्रन्थियों को भी। विशेष रूप से छह आवश्यकों में उद्यम किया था। छह प्रकार के जीवों में दया भाव प्रकाशित किया था। छहों लेश्याओं के परिणाम शान्त हो गये, छहों द्रव्य प्रत्यक्ष दिखाई देने लगे। गम्भीर उन्होंने सातों भयों को समाप्त कर दिया, उस धीर ने सातों तत्वों का ज्ञान प्राप्त कर लिया। सदय उसने आठों मदों का त्याग कर दिया, उस वरिष्ठ ने आठों सिद्ध गुणों का स्मरण कर लिया। उसने नौ प्रकार के ब्रह्मचर्य का परिपालन किया, नवपदार्थ परिमाण को देख लिया।

घत्ता—इस प्रकार के जिनधर्म को और अविकारी धीर श्रावकों की जड़मति को नष्ट करने वाली ग्यारह प्रतिमाओं तथा मुनियों की बारह प्रतिमाओं को जान लिया ॥१०॥

११

उन्होंने तेरह प्रकार के क्रिया स्थानों को समझ लिया और तेरह प्रकार के चारित्रों को गिन लिया, चौदह परिग्रह मलों को छोड़ दिया, प्राणियों के चौदह भेदों को जान लिया है। पन्द्रह प्रमादों को छोड़ते हुए, पुण्य-पाप की भूमि को जानते हुए, सोलह प्रकार की भावनाओं को धारण करते हुए, सोलह प्रकार के वचनों में रमण करते हुए और भी सत्रह असंयम सोलहवें अठारह समपराय सोलहवें,

इउणवीस वि णाहज्झयणइं
वीसविहइ असमाहीठाणइ ।
एक्कवीस सवल वि णिरु णीसइ
सहिंवि दुवीस दुसज्ज परीसह ।
तेतीस वि मुत्तयडइं सुत्तइं
चउवीस वि जिणतित्थइ होंतइं ।
पचवीस भावणउ धरंतें
छव्वीस वि पुहवीउ णियंतें ।
सद्दवीस जइगुण सुमरंतें ।
अट्ठवीस णियचित्ति समप्पिवि
पवरायारकप्प पवियप्पिवि ।
एउणतीस वि दुक्कियसुत्तइं
तीस मोहठाणइं वलवंतइं ।
एक्कतीस मलवाय धुणंतें
जिणुवएस वत्तीस मुणंतें ।

घत्ता–थिरु सुक्कझाणु आऊरियउ घाइचउक्कु पणट्ठउ ॥
उप्पाइउ केवलु मुणिवरेण लोयालोउ वि दिट्ठउ ॥११॥

१२

देवेन्द्र द्वारा स्तुति

ता सुर चल्लिय समउ सुरिंदें
तारायणु चल्लिउ सहुं चंदें ।
णरवइ धाइय समउ णरिंदें
उरय समागय सहुं धरणिंदें ।
तेहिं कसायविसायवियारउ
संथुउ सिरिवाहुवलि भडारउ ।

उन्नीस प्रकार के नाह-ध्यान (नाथ ध्यान), बीस असमाधिस्थानों, इक्कीस गन्द अपवित्र कार्यों और बाईस असाध्य परिसहों को सह कर। तेईस सूत्रकृतांग सूत्र और चौबीस जिनतीर्थों में होते हुए, पच्चीस भावनाओं को धारण करते हुए, छब्बीस क्षेत्रों को देखते हुए, सत्ताईस मुनिगुणों को स्मरण करते हुए, अट्ठाईस मूलगुणों को अपने मन में समर्पित कर प्रवर आचार-कल्प के प्रति अर्पित कर, उनतीस दुष्कृत सूत्रों, तीस बलवान मोह स्थानों और इकतीस मन पापों को नष्ट करते हुए और बत्तीस जिनगुणों का मनन करते हुए—

घत्ता—स्थिर शुक्ल ध्यान की अवतारणा कर चार घातिया कर्मों को नष्ट कर दिया। मुनिवर को केवल ज्ञान उत्पन्न हो गया और उन्होंने लोकालोक को देख लिया ॥११॥

१८

देवेन्द्र द्वारा स्तुति

तब देवेन्द्र के साथ देव चले। तारागण चन्द्रमा के साथ चले। राजा लोग नरेन्द्र के साथ दौड़े। और नाग धरणेन्द्र के साथ आये। उन्होंने कषाय और विवाद को नष्ट करने वाले आदरणीय बाहुबली की स्तुति की—

भायरणाणलभसतुट्ठउ
एत्तहिं णरणारीयणदिट्ठउ ।
उज्झाणयरिहिं भरहु पइट्ठउ
उपरमाणि हरिवीढि वइट्ठउ ।
वज्जंतहिं जयवज्जणिहायहिं
गाइयणारयतुंवुरुगेयहिं ।
दरिसियमेइणिरिद्धिविहोयहि
उव्वसिरंभाणभट्टविणोयहिं ।
मंडलियहिं मंडियणियवक्खहिं
अहिसिंचिउ मंगलघडलक्खहिं ।

घत्ता—चउसट्ठि सरीरइ लक्खणाइं बहुवंजणइं अणिदहो ।।
जं णिहिलहं भारहणरवईहिं त बलु भरहणरिंदहो ।।१३।।

१४

भरत का ऐश्वर्य

वण्णु तत्ततवणीयपहायरु
सासणु जासु चक्कलच्छीहरु ।
वज्जरिसहणारायणिवंधेउ
समचउरंसु ठाणु रुइरिद्धउ ।
पुण्णपहावें अतुलु वि लद्धउ
छक्खंडु वि महिमंडलु सिद्धउ ।
दोण्णि तीस सहसाइ सुदेसइं
दोसत्तरि पुरवरइं पयासइं ।
णवइ णव जि दोणामुहसहसइं
पट्टणाहं अडदाल सहरिसइं ।
खेडहं सोलह ताइं पउत्तइं
चोद्दह संवाहणहं णिरुत्तइं ।

सब भाई के ज्ञान लाभ से सन्तुष्ट और नर नारीजन के द्वारा देखे गये भरत ने अयोध्या नगरी में प्रवेश किया और अपने वक्ष-स्थल के समान ऊँचे सिंहासन पर बैठ गया। बजते हुए जय विजय बाजों, गाये जाते हुए नारद तुम्बरु के गीतों, दिखाये जाते हुए नर्तकों के ऋद्धि विभागों, उर्वशी और रम्भा के नृत्य विनोदों के साथ एकत्रित हुए राजा के पक्ष समूहों के द्वारा लाये मंगल-कलशों से उसका अभिषेक किया गया।

घत्ता—उसके अनिन्द्य शरीर पर चौंसठ लक्षण और बहुत से व्यंजन चिन्ह थे, जो समस्त भारत नरेश्वरों का बल था, उतना बल अकेले भरतराज के पास में था ॥१३॥

१४

भरत का वैभव

जिसका रंग तपे हुए स्वर्ण और सूर्य के समान था, जिसका शासन नव लक्षों को धारण करता था, जिसका शरीर वज्रवृषभ नाराच बन्ध और समचतुरस्र संस्थान वाला था। कान्ति से समृद्ध था। पुण्य के प्रभाव से उसने अनन्त को प्राप्त कर लिया और छह खण्ड धरती भी सिद्ध हो गई। साठ हजार सुरेश थे, बहत्तर हजार श्रेष्ठ नगर थे। छियानवे हजार द्रोणामुख गांव थे और अड़तालीस हजार पट्टन थे। सोलह हजार खेड़े और निश्चित रूप से नयनाभिराम,

कलवकणिसभरभारियसीमहु
छण्णवइ जि कोडिउ वरगामहु ।
सत्तसयाइ कुकुच्छिणिवासह
पच तहं मि धरियपरिहासहं ।
अट्ठवीस वणदुग्गाइं रिद्धइ
छप्पण्णंतरदीवइं सिद्धइं ।
सहसट्ठारह मेच्छणरेसहं
वत्तीस जि मंडलियमहीसह ।
घत्ता—देवीहिं दुतीस वत्तीस पुणु मेच्छणराहिवा दिण्णहं ।।
वत्तीससहस अवरुद्धियहं णिरु णिरुवमलयण्णहं ।।१४।।

१५

भरत का वैभव

घरि भावाणुविभावपयासइ
णडंति दुतीससहासइ ।
चउरासीलक्खइं मायंगह
तेत्तीय जि रहाहं सरहगह ।
तइकोडिउ किंकरहं अहंगह
अट्ठारह भणियाउ तुरगहं ।
चुल्लिहिं कोडि रसायणरसियह
सट्ठइ तिण्णि सयइठाणसियह ।
वरिसणि णंगरकोडि पयट्टइ
फलभारेण धरित्ति विसट्टइ ।
कालणामु णिहि देइ विचित्तइ
वीणावेणुपडहवाइत्तइ ।
णिवहु महाकालु वि सजोयइ
पडु देइ णाणाविहवण्णाइ ।

सालिवीहिपमुहइ बहुधण्णइं
असिमसिकिसिउवयरणइं ढोयइं ।
णेमप्पु वि सयणासणभवणइं
वत्थइ पोमु पिंगु आहरणइ ।
अत्थइं सत्थइं माणवु देंतउ
संखु ण थाइ सुवण्णु वहंतउ
सव्वरयणणिहि सव्वइं रयणइं
सिरीवहु उरयलि णयणाइ

घत्ता—असि चक्कु दडु छत्तु वि धवलु पहरणसालहि जायइं ॥
कागणि मणि चम्मु वि सिरिभवण सइंणरणाहहु आयइ ॥१५

१६

भरत का वैभव

रुप्पयमहिहरि सोहियवयणह
सभउ हरिकरिणारीरयणह ।
पच्छइ पुणु संपत्तइ णरवइ
घरवइ थवइ पुरोहित बलवइं ।
चत्तारि वि हूयइं साकयइ
घरसिरधयवारियरवितयइ ।
णव णिहि ते वित्तहि जि सभूया
सपाइयइच्छियहलरूया ।
णिच्चमेव तणुरक्खालुद्धहं
सोलहसहस सुरहं गणबद्धह ।
विविहघरइ कणयधरणियलइ
विविहासणइ विविहसयणयलइं ।
विविहइ छत्तइं मुत्तादामइ
विविहइं आहरणाइं सकामइं ।

ब्रीहि (धान्य) प्रमुख अनेक प्रकार के धान्य प्रदान करती थी। नैसर्प निधि शयन, आसन और भवन। पद्म वस्त्रों को, पिंग आभरणों को अस्त्र-शस्त्र माणव देती थी। स्वर्ण ढोते हुए शंख निधि नहीं हारती थी। समस्त रत्न निधियाँ नव प्रकार के रत्नों और लक्ष्मी उसके उरतल पर अपने नेत्र प्रदान करती थी।

घत्ता—असि, चक्र, दण्ड, धवल छत्र उसकी आयुधशाला में में उत्पन्न हुए। कागणी मणि और चर्म मणि भी अपने आप राजा के भाण्डागार में आ गये ॥१५॥

१६

भरत का वैभव

विजयार्ध पर्वत पर शोभित मुख वाले अश्वों, गजों और स्त्रीरूपी रत्नों की उत्पत्ति हुई। उसके बाद राजा को गृहपति, स्थपति, पुरोहित और सेनापति प्राप्त हुए। अपने गृह शिखरों के ध्वजों से सूर्य के तेज का निवारण करने वाले वे चार रत्न साकेत में उत्पन्न हुए। जो सर्वनिधियाँ थीं वे भी उसे प्राप्त हुईं कि जो अभिलषित वस्तुओं को सम्पादित करने वाली थीं।

विविहइ वथइ ठकयवउसोवज्झइ
विविसइं भोयणभवज्झइं ।
को सो वंभु कासु मुकइत्तणु
को वण्णइ चक्कवइपहुत्तणु ।
को सो वंभु कासु मुकइत्तणु
को वण्णइ चक्कवइपहुत्तण ।
णोर्ि ी रयणत्तणविक्खायइ
खयररायवंससजायइ ।
रुवें सोहग्गें लायण्णें
णेहें रइयसुरयणेउण्णें ।
अब्भुयभूयइ जणमणमद्दइ
सुहुं भुंजंतउ समउ सुहद्दइ ।

घत्ता—सिरिरमणीवरघणथणजुयवसिहरुप्पेल्लियउरयलु ।।
थिउ उज्झहि भरहणराहिवइ पुप्फदंततेउज्जलु ।।१६।।

इय महापुराणे तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकारे महाकविपुप्फयंत-विरइए महाभव्वभरहाणुमण्णिए महाकव्वे भरहविलासवण्णण णाम अट्ठारमो परिच्छेओ समत्तो ।।१८।।

संधि ।। १८ ।।

जहाँ पर देहरक्षा में दक्ष गणबद्ध सोलह हजार देवों के विविध घर और स्वर्णधरणी तल थे, विविध आसन और विविध शयनतल थे। विचित्र छत्र, मुक्तामालाएँ, चित्त में अनुराग उत्पन्न करने वाले विविध आभरण, शरीर को सुख देने वाले विविध वस्त्र और विविध सरस भोजन। वह कौन-सा विचारा है, वह कौन-सा सुकवित्व है? चक्रवर्ती की प्रभुता का वर्णन कौन कर सकता है? स्त्रीरूपी रत्नद्रव्य के लिए विख्यात, विद्याधर कुल में आश्चर्य के रूप में उत्पन्न जनमन का मर्दन करने वाली सुभद्रा के साथ रूप, सौभाग्य, लावण्य रत्न और काम के नैपुण्य की रचना के द्वारा सुख भोगता हुआ—

घत्ता—जिसका वक्ष स्वयं लक्ष्मीरूपी रमणी के श्रेष्ठ सघन स्तनयुगल के शिखरों से पीड़ित है, ऐसा भरत अयोध्या में रहने लगा ॥१॥

इस प्रकार त्रेसठ महापुरुषों के गुणालंकारों से युक्त महापुराण में महाकवि पुष्पदन्त द्वारा रचित महाभव्य भरत द्वारा अनुमत महाकाव्य भरत-विजय वर्णन नाम का अठारहवाँ परिच्छेद समाप्त हुआ ॥१८॥

संधि ॥१८॥

लयासमक्कंत - महासरीरं । भव्वावलीलद्ध - सुकप्परुक्खं ।।
देविंदविंदच्चियपायपोम्मं । तं गोम्मटेसं पणमामि णिच्चं ।।५।।

जिनका विशाल शरीर, लताओं से समाक्रांत है जिनसे भव्यों ने सुन्दर कल्पवृक्ष प्राप्त किया है, जिनके चरणकमल देवेन्द्रसमूह से अचित हैं ऐसे उन गोम्मटेश को मैं नित्य प्रणाम करता हूँ ।

दियंवरो यो ण च भीइ-जुत्तो । ण चांवरे सत्तमणो विसुद्धो ।।
सप्पादि जंतुप्फुसदो ण कंपो । तं गोम्मटेसं पणमामि णिच्चं ।।६।।

जो दिगम्बर है जो भय से युक्त नहीं है, जो वस्त्रों में आसक्त-मन नहीं है, जो विशुद्ध है, जिन्हें सापादि जंतुओं के छूने से कंप नहीं होता, ऐसे उन गोम्मटेश को मैं नित्य प्रणाम करता हूँ ।

आसां ण यो पेक्खदि सच्छदिट्ठि । सोक्खे ण वंछा हयदोसमूलं ।।
विरायभावं भरहे विसल्लं । तं गोम्मटेसं पणमामि णिच्चं ।।७।।

जो आशा को नहीं देखते, जो स्वच्छदृष्टि है जिनकी भौतिक सुखों में इच्छा नहीं है, जिन्होंने दोषों के मूल को उखाड़ दिया है, जो विरागभाव वाले है जो भरत के प्रति शल्य रहित है, ऐसे उन गोम्मटेश को मैं नित्य प्रणाम करता हूँ ।

उपाहिमुत्तं धण-धाम-वज्जियं । सुसम्मजुत्तं मय-मोहहारयं ।।
वस्सेय-पज्जंतमुववास-जुत्त । तं गोम्मटेसं पणमामि णिच्चं ।।८।।

जो उपाधियों से मुक्त है, जो धन और धाम से रहित है, जो सम्यक्त्व भाव से युक्त है जो मद और मोह का हरण करने वाले है, जो एक वर्ष तक उपवास से युक्त रहे, ऐसे उन गोम्मटेश को मैं प्रणाम करता हूँ ।

देवेन्द्रकुमार जैन

सन्धि १६

अयोध्या मे स्वागत की तैयारी

पणवेप्पिणु जिणवरकमकमलु ओयरेवि कइलासहो ।
साकेयहु समुहुं सचलिउ धरणिणाहु णियवासहो ।। ध्रुवकं ।

१

आरणाल--रविणिहकण्णकुडला रयणमेहला मउडपट्टधारा ।
चलिया मंडलेसरा खयरसुरणरा कंठवद्धहारा ।।१।।

होइ गिरित्थलु णिविसें समथलु
कि ण कि ण किर कद्दमियउ जलु ।
कि ण कि ण सच्चूरिउ वणु
कि ण कि ण धूली जायउ तणु ।
कि ण कि ण पहरणु अवलोकउ
कि ण कि ण पडिसेण्णु णिवाइउ ।
कि ण कि ण वरवाहणु वाहिउ
कि ण कि ण परमंडलु साहिउ ।
कणयदंडमंडियपडिहारें
आवेंतें पहुखंधावारें ।
पुरणारिहिं आहरणु लइज्जइ
मउ देवंगवत्थु परिहिज्जइ ।
कुंकुमेण छडउल्लउ दिज्जइ
कप्पूरें रंगावलि किज्जइ ।
घिप्पइ कुसुमकरंवु समंडयणु
बज्झइ सुरतरुपल्लवतोरणु ।
घरि घरि गाइज्जइ जिणणंदणु
दोवदहियमिद्धत्थयचंदणु ।

सन्धि १६

अयोध्या मे स्वागत की तैयारी

जिनवर के चरणकमलो को प्रणाम कर और कैलास से उतरकर पृथ्वी का स्वामी भरत अपने निवास साकेत के सम्मुख चला ।

१

सूर्य के समान कर्णकुण्टलो और रत्नो की मेखला वाले, मुकुट पट्ट धारण किये हुए और गले मे हार पहने हुए मण्डलेश्वर, विद्याधर, सुर, और मनुष्य चले । गिरि-स्थल एक पल मे समतल हो गया । कौन-कौन जल कीचडमय नही हुआ ? कौन-कौन-सा वन चूर-चूर नही हुआ ? कौन-कौन तृण धूल नही हुआ । किस-किस देशान्तर को उन्होने नही लाघा ? किस-किस दुर्ग का आश्रय नही लिया ? किस-किस आयुध को नही देखा ? किस-किस शत्रु सेना का प्रतिपतन नही किया ? किस-किस वाहन को नही चलाया ? किस-किस शत्रु मण्डल को नही साधा ? स्वर्ण दण्डो से अलकृत है प्रतिहारी जिसमें, प्रभु के ऐसे स्कन्धावार के आने पर पुरस्त्रियो के द्वारा अपने आभरण ग्रहण किए जा रहे है । कोमल देवाग वस्त्र पहने जा रहे है । केशर का छिडकाव किया जा रहा है । कपूर से रांगोली की जा रही है । भ्रमर सहित कुसुम फेंके जा रहे है । देववृक्षो (कल्पवृक्षो) के पल्लव-तोरण बाधे जा रहे है । घर-घर मे जिनपुत्र का गान किया जा रहा है ।

दप्पणु कलसु धरिज्जइ अण्णहि
उग्घोसिउ मंगलु सुरकण्णहिं ।।
सलहिज्जतु महतु सुरिंदहिं
सहु जक्खिदखगिंदणरिंदहिं ।
करिवरकधरत्यु मणहारिहिं
विज्जिज्जतउ चामरधारिहिं ।

घत्ता--महि सयल वि खग्गें णिज्जिणिवि कयदिव्विजयविलासहिं ।
उज्झहि भरहाहिउ पइसरइ सट्ठिहिं वरिससहासहिं ।।१।।

२

चक्ररत्न का नगर के मुख्य द्वार पर गतिरोध–

आरणाल–णउ पइसरइ पुरवरे रयणमयहरे जयसिरीवरंगं ।।
भंगुरभासुरारयं णिसियधारयं राइणो रहंगं ।।१।।

थक्कउ चक्कु ण पुरि परिसक्कइ
कुकइहि कव्वु व णउ चिम्मक्कइ ।
ण कोवाणलजालामंडलु
ण पुरलच्छिइ परिहिउ कुंडलु ।
भरहपयावें कायरिजायउ
भाणुबिंबु ण छज्जइ आयउ ।
इंदचंदपडिकूलणमीलउ
धगधगंतु खयहुयवहलीलउ ।
एहु जि चक्कवट्टि अवलोयहु
णयरें दीवु धरिउ णं लोयहु ।
मणिमऊहमालावेल्लाउलु
रायदिवायरपुण्णयउज्जलु ।
मुग्गहिगधु मिग्मिविउ मभमनु

दूसरी कन्याओ के द्वारा दूध, दही, तिल और चन्दन, दर्पण, कलश धारण किये जा रहे है। देवकन्याओ द्वारा मगलघोष किया जा रहा है। यक्षेन्द्रो, खगेन्द्रो और मानवेन्द्रो के साथ सुरेन्द्रो के द्वारा प्रशंसा की जा रही है। गजवर के कन्धे पर बैठा हुआ, सुन्दर चमर धारण करने वाली स्त्रियो के द्वारा हवा किया जाता हुआ--

घत्ता---समस्त धरती को तलवार से जीतकर साठ हजार वर्षो तक दिग्विजय-विलास करने के बाद भरत राजा अयोध्या नगरी मे प्रवेश करता है ॥१॥

२

चक्ररत्न का मुख्य द्वार पर गतिरोध ---

विजयश्री की लीला धारण करनेवाला, क्षण-क्षण मे प्रदीप्त होने वाला, और पैनी धारवाला राजा का चक्र रत्ननिर्मित पुरवर मे प्रवेश नही करता। चक्र स्थित हो गया, वह नगर मे प्रवेश नहीं कर सकता, कुकवि के काव्य की तरह चमत्कार उत्पन्न नही करता। मानो कोप रूपी आग का ज्वालामण्डल हो, मानो नगर लक्ष्मी ने कुण्डल पहन लिया हो। भरत के प्रताप से कायर हुआ मानो आया हुआ भानुबिम्ब शोभित हो, इन्द्र और चन्द्रमा को प्रतिकूल करने वाला मानो वह चक्र धक्-धक् करता हुआ, प्रलयकाल की लीला के समान है। नगर ने मानो लोक के लिए दीपक रख दिया है (यह बताने के लिए) कि देखो यही चक्रवर्ती है, जो मणियो की किरणमालाओ के ठहरने का स्थान है, जो राजदिवाकर की पुण्य किरणो से उज्ज्वल है, ऐसा सुरभित गंधवाला लक्ष्मी से सेवित, और भ्रमरो से सहित चक्र ऐसा मालूम होता है।

णं णहसरि विहरिउ रत्तुप्पलु ।
वलयायारहु णिय राच्छायहु
अवसें वेढ धरणि पर आयहु ।
घत्ता–तं चक्कु ण णयरिहि पइसरइ वेसहि जणियवियारउ ।।
हियउल्लउ कयउसयहं भरिउ णावइ धुत्तहं केरउ ।।२।।

3

चक्र के गतिरोध पर उपमाएँ–
आरणालं–फणिणरसुरपसंसिय जसविहूसिय गुणगणोहदित्तं ।
णं दुविणीयमाणसे पिसुणमाणुसे सुयणसच्छचित्तं ।।१।।
अक्कमियक्कउ बाहिरि थक्कउ
णावइ वइयें खीलिवि मुक्कउ ।
णउ पइसइ पुरि चक्कु णिरुत्तउ
सुहघरि णं अण्णायविढत्तउ ।
परपुरिसाणुराइ सइचित्तु व
परदारात्तणम्मि सवसित्तु व ।
मायाणेहणिबंधणि मित्तु व
पत्तयाणि पाविट्ठहु चित्तु व ।
पुणयविलीणइ दिण्णउ भत्तु व
रइरसातुरियइ णवउ कलत्तु व ।
गुरुसिद्धमइति जमकरणु व
गत्थणितेविरि रयवित्थरणु व ।
णिब्भत्तणीसणिहेलणि सरणु व
दुरियमलिणमणि पंडियमरणु व ।
उयसमिल्लि सामरिसायरणु व
णिद्धियारि तणभूसायरणु व ।

मानो आकाश रूपी नदी मे रक्तकमल खिला हो। वलय के आकार वाले, अत्यन्त सुन्दर कान्ति से युक्त इसके लिए धरती अवश्य कर देगी।

घत्ता—वह चक्र, उसी प्रकार नगर में प्रवेश नही करता जिस प्रकार सैकडो कपटो से भरा हुआ, धूर्तो का विकार पैदा करने वाला हृदय वेश्या मे प्रवेश नही करता ॥२॥

३

चक्र के गतिरोध पर उपमाएँ:—

मानो जैसे नाग-नरो और देवो द्वारा प्रशसित, यश से विभूषित और गुणगण समूह से दीप्त, सज्जन का स्वच्छ चरित्र, दुर्विनीत मानस वाले दुष्ट मनुष्य मे प्रवेश नही करता। सूर्य का अतिक्रमण करने वाला वह चक्र बाहर ऐसा स्थित हो गया, मानो दैव ने उसे कीलित करके छोड दिया हो। निश्चितरूप से चक्र पुर मे प्रवेश नही करता, मानो अन्याय मे उपार्जित धन पवित्र घर मे प्रवेश नही कर रहा हो, जैसे सती का चित्त, पर पुरुष के अनुराग मे, जैसे स्वतन्त्रता दूसरो की दासता मे, मायावी के स्नेह वन्धन मे मित्र के समान, पात्रदान मे, पापी के चित्त के समान, अरुचि से पीडित व्यक्ति मे दिये गये भात के समान, रति मे व्याकुल मनुष्य मे नई विवाहित दुलहिन के समान, शुद्ध सिद्ध मण्डल मे यमकरण के समान, पथ्य का सेवन करने वाले मे रोग के विस्तार के समान, दुर्वल और धनहीन के घर मे शरण के समान, पाप से मलिन मन में पण्डित मरण के समान, उपशान्त व्यक्ति मे क्रोधपूर्ण आचरण के समान, निर्विकार में शरीर की भूपा के समान,

पर मुहियइ भुंजंति वसुंधर ।
अज्ज वि ते सिज्झंति ण जेण जि
पइसइ पट्टणि चक्कु ण तेण जि ।

घत्ता–रइवरु परमेसरु उच्छुधणु धरणिहरणरणपरियरु ।।
कासवतणुरुहु णवणलिणमुहु भुवणुद्धरणधुरंधरु ।।४।।

५

वाहुवली के विरोध का अनुमान

आरणाल–विलसियकुसुममग्गणो गरुयगुणगणो तरुणिहिययथेणो ।
अतरिसविसमसाहसो वसि हयालसो णिहयवेरिसेणो ।।१।।

अण्णु वि जसवइतणयहु जेट्ठउ
पुत्तु सुणंदहि तुज्झु कणिट्ठउ ।
सायरु जिह तिह मयरधयालउ
चावहं चारुवयणु चरियालउ ।
पंचसयाइं सवायइ तुंगउ
भण्णइ सयहिं मो जिज अणंगउ ।
वालु वंभसुदरिहिं सहोयरु
पिउपयपयरुहरयरउ महुयरु ।
हरियदेहु णं मरगयगिरिवरु
अरिकरिदसणमुसलपसरियकरु ।
विमलकुलालवालसुरतरुवरु
चरमदेहु सासयसुहसिरिहरु ।
गुरुचरणारविंदरइरसवसु
मदरकंदरतगाइयजसु ।
दुतियदीणाणाहहं दिहियरु
णरहरिसरणागयपविपजरु ।

व्यर्थ ही धरती का उपभोग करते है। जिस कारण वे आज भी जो तुम्हे कर नही देते, वे सिद्ध नही हो सके है, उसी कारण चक्र नगर मे प्रवेश नही कर रहा है।

घत्ता—कामदेव परमेश्वर इक्षुधनुष से युक्त, धरती के अपहरण और युद्ध के परिकरवाला, कामव (ऋषभ) का पुत्र, नवकमल के समान मुख वाला, तथा विश्व के उद्धार मे धुरंधर ॥४॥

५

वाहुवली के विरोध का अनुमान

कामदेव से विलसित, भारी गुणो से युक्त, युवतियो के हृदय को चुराने वाला, असामान्य विषम साहसवाला, वशी, आलस्य को नष्ट कर देनेवाला और शत्रु सेना को समाप्त कर देनेवाला और भी यशोवती के पुत्रो मे जेठा परन्तु तुमसे छोटा, सुनन्दा का पुत्र, जिस प्रकार कामदेव, उसी प्रकार, मकरध्वजालय (मकररूपी ध्वजो का घर), सुन्दर मुख, चरित्र का आश्रय, और सवा पांच सौ धनुष ऊँचा, उसी को इस समय कामदेव कहा जाता है, ब्राह्मी सुन्दरी का भाई, पिता के चरणरूपी कमलो मे रत भ्रमर, श्यामशरीर जैसे मरकत का पहाड हो, शत्रुरूपी गजो के दाँतो रूपी मूसलो के लिए हाथ फैलाने वाला, पवित्र कुलरूपी आलवाल (क्यारी) का कल्पवृक्ष, चरमशरीरी, तथा शाश्वत सुखश्री को धारण करने वाला, गुरु के चरणकमलो के प्रेम रस के अधीन, पर्वतो की गुफाओ तक जिसका यश गाया जाता है, दुस्थितो, दीनो और अनाथो का भाग्य विधाता, मनुष्य-श्रेष्ठ, शरणागतो के लिए वज्रपजर (वज्र कवच),

को णासकइ महु करवालहु ।
को किर भिच्च महारा मारइ
को विणिवारइ मज्झु वि मारइ ।
किं किर वण्णिएण कंदप्पें
अणवतहु णिवडइ कं दप्पें ।

घत्ता–इय जंपिवि राएं णिक्करुणु अविणयविहियमणोज्जह ।।
सयलह मि सयलसपयधरहं लेहु दिण्णु दाइज्जह ।।६।।

७

दूतों का भरत के भाइयों को समझाना –

आरणाल–ता विगया वहुयरा जणमणोहरा णिवकुमारवास ।
दुमदललतियतोरण रसियवारण छिण्णभूमिदेसं ।।१।।

तेंहि भणिय ते विणउ करेप्पिणु
सामिसालतणुरुह पणवेप्पिणु ।
सुरणरविसहरभयह जणेरी
करहु केर णरणाहहु केरी ।
पणवहु किं वहुवेण पलावें
पुहइ ण लब्भइ मिच्छागावें ।
त णिसुणेवि कुमारगणु घोसइ
तो पणवहु जइ वाहि ण दीसइ ।
तो पणवहु जइ सुसुइ कलेवरु
तो पणवहु जइ जीविउ सुंदरु ।
तो पणवहु जइ जरइ ण झिज्जइ
तो पणवहु जइ पुट्ठि ण भज्जइ ।
तो पणवहु जइ वलु णोहट्टइ
तो पणवहु जइ सुइ ण विहट्टइ ।

आशंकित नही होता, कौन मेरे अनुचरो को मारता है? कौन प्रतिकार करता है और मुझे भी मारता है? कामदेव का वर्णन करने से क्या? नही प्रणाम करते हुए उसका सिर दर्प से गिर जाता है?

घत्ता—यह कहकर, जिन्होने अविनय के साथ मन चाहा किया है, जो समस्त धरती की सम्पत्ति को धारण करनेवाले है, ऐसे समस्त शत्रुओ के पास कठोर लेखपत्र प्रेषित किया ।।७।।

७

दूतो का भरत के भाइयो को समझाना –

तब जनो के लिए सुन्दर दूत, जहां द्रुमदलो के सुन्दर तोरण है, गज चिग्धाड रहे है, और जिनको भूमि प्रदेश ढके हुए है, नृप कुमारो के ऐसे आवास पर गये । स्वामीश्रेष्ठ के उन पुत्रो को प्रणाम करते हुए उन्होने विनय के साथ निवेदन किया, "सुरो-नरो और विषधरो मे भय उत्पन्न करने वाली राजा की सेवा करो और उन्हे प्रणाम करो, बहुत प्रलाप से क्या? मिथ्या गर्व से धरती प्राप्त नही की जा सकती ।" यह सुनकर कुमारगण घोषित करता है— 'हम तब प्रणाम करते है यदि उसमें (भरत मे) कोई व्याधि दिखाई नही देती । तब प्रणाम करते है यदि उसका शरीर पवित्र है, तब प्रणाम करते है यदि उसका जीवन सुन्दर है । तब प्रणाम करते है यदि वह जरा से क्षीण नही होता । तब प्रणाम करते है यदि वह पीठ देकर नही भागता, तो प्रणाम करते है यदि उसका बल नष्ट नही होता, तब प्रणाम करते है यदि उसकी पवित्रता नष्ट नही होती,

तो पणवहु जइ मयणु ण तुट्टइ
तो पणवहु जइ कालु ण खुट्टइ ।
कंठि कयतवासु ण चुहुट्टइ
तो पणवहु जइ रिद्धि ण तुट्टइ ।

घत्ता—जइ जम्मजरामरणइ हरइ चउगइदुक्खु णिवारइ ।।
तो पणवहु तासु णरेसहो जइ संसारहु तारइ ।।७।।

८

भाइयो की प्रतिक्रिया

आरणाल—पुणरवि तेहिं गहिरय सवणमहुरयं एरिसं पउत्तं ।
आणापसरधारणे धरणिकारणे पणविउं ण जुत्तं ।।१।।

पिडिखडु महिखंडु महेप्पिणु
किह पणविज्जइ माणु मुएप्पिणु ।
वक्कलणिवसणु कंदरमदिरु
वणहलभोयणु वर तं सुंदरु ।
वर दालिद्दु सरीरहु दंडणु
णउ पुरिमहु अहिमाणविहडणु ।
परपयरयधूसर किंकरसरि
असुहाविणि ण पाउससिरिहरि ।
णिवपडिहारदडसंघट्टणु
को विसहइ करेण उरलोट्टणु ।
को जोयइ मुहुं भूभगालउ
किं हरिसिउ किं रोसें कालउ ।
पट्ट आसण्णु लहइ धिट्ठत्तणु
पविरन्नदमणु णिण्णेहत्तणु ।
मोर्णे जड्डु भट्टु खंनिइ कायरु

तो प्रणाम करते है यदि कामदेव नष्ट नही होता, तो प्रणाम करते हैं यदि काल समाप्त नही होता, तो प्रणाम करते है यदि गले मे यम नही लगता तो प्रणाम करते है, यदि ऋद्धि समाप्त नही होती।

घत्ता—यदि वह जन्म-जरा और मरण का अपहरण करता है, चार गतियो के दु ख का निवारण करता है, और समार मे उद्धार करता है तो हम उस राजा को प्रणाम करते है ।।७।।

८

भाइयो की प्रतिकिया

उन्होने और भी गम्भीर कानो के लिए मधुर, इस प्रकार कहा कि धरती के लिए और आज्ञा का प्रसार करने के लिए प्रणाम करना उचित नही है। शरीर खण्ड या धरती के खण्ड को महत्त्व देकर और मान छोडकर प्रणाम किया जाए। वल्कलो का पहनना, गुफाओ का घर, और वनफलो का भोजन, यह सुन्दर है। दारिद्र्य और शरीर का खण्डन अच्छा, परन्तु मनुष्य का अभिमान को खण्डित करना ठीक नही। किकररूपी नदी दूसरो के पदरज से धूसरित है। पावस की श्री को धारण करनेवाली असुहावनी है। राजाओ के द्वारवालो के दण्डो का सघर्पण और हाथ उर को स्पर्श करना कौन सहे ? भौहो से टेढा मुख कौन देखे कि वह प्रसन्न है या कोध से ाला है, (सेवक) यदि राजा के निकट है तो वह ढीठपन को प्राप्त ोता है, यदि कभी-कभी दर्शन करता है तो स्नेहहीन समझा जाता ौन रहने से जड (मूर्ख) और शान्त से रहने पर कायर,